रु. 25.00

अंक-23

जनवरी 2005 - दिसम्बर 2005

चन्द्रताल

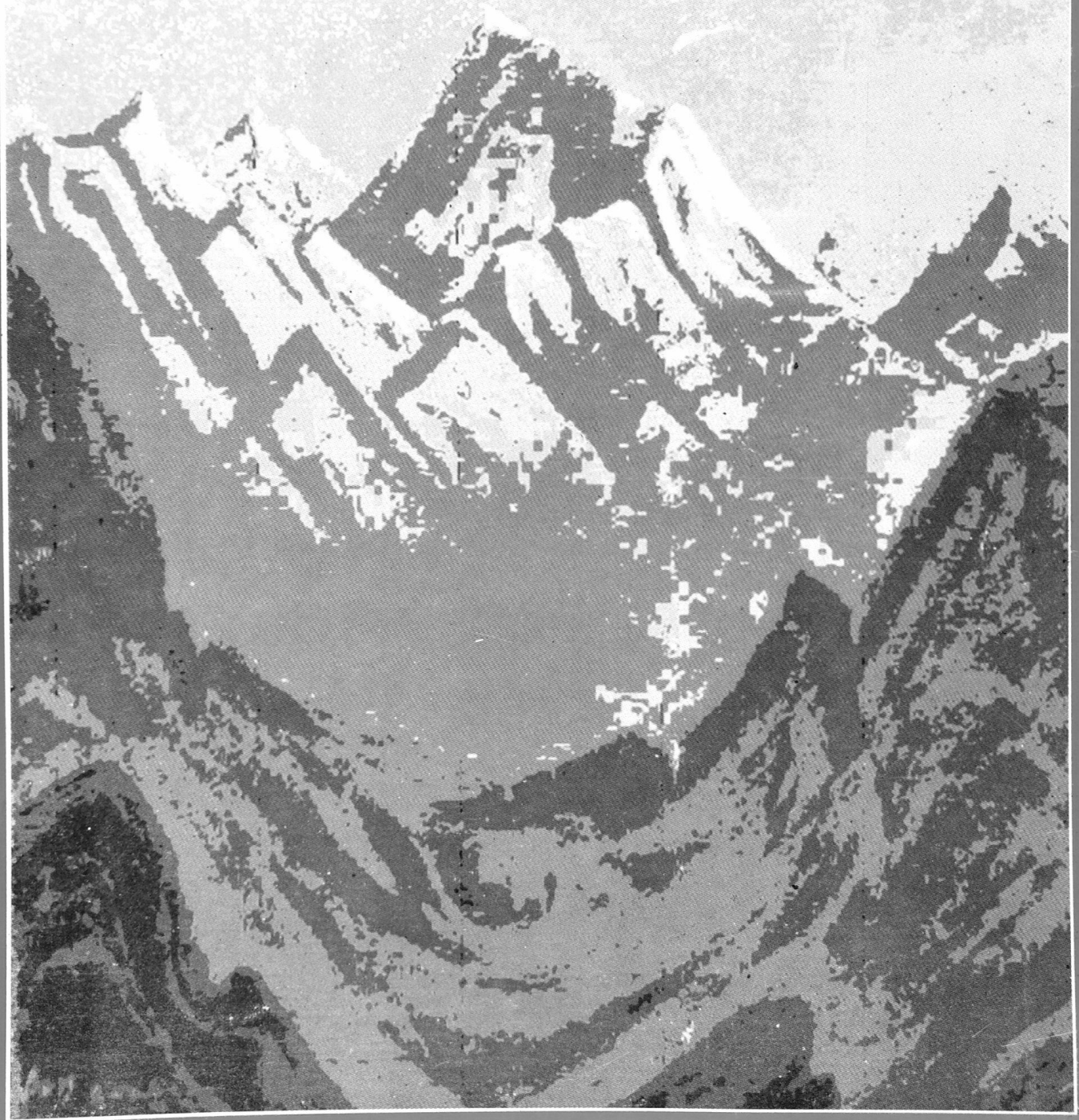

श्री हरीश चन्द

उपमहाप्रबन्धक (दूरसंचार परियोजना)

17 मई विश्वभर में 'विश्व संचार दिवस' के रूप में मनाया जाता है। इस अवसर पर 17 मई, 2005 को भारत संचार निगम लिमिटेड द्वारा उत्कृष्ट सेवा में अनुकरणीय योगदान के लिए श्री हरीश चन्द सुपुत्र श्री पन्ना लाल गांव रालिंग को, अति विशिष्ट सेवा पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया। श्री हरीश चन्द उत्तरी दूरसंचार परियोजना परिमण्डल शिमला में उपमहाप्रबन्धक (दूरसंचार परियोजना) के पद पर कार्यरत हैं। एक कुशल नियोजक और संस्थापक के रूप में इन्होंने हिमाचल प्रदेश दूर संचार परिमण्डल में पिछड़े, दुर्गम एवं जनजातीय क्षेत्र में बहुत से ट्रांसमिशन सिस्टमों को स्थापित किया।

1. इन्होंने अतिरिक्त निजी प्रयासों से प्रतिकूल मौसम, -10^0 सै0 की स्थिति में रोहतांग दर्रा से केलंग तक ओ.एफ.सी. केबल बिछाकर, जनजातीय ज़िले को ओ.एफ.सी. नेटवर्क से जोड़ने का कार्य किया।

2. हि0प्र0 की राजधानी शिमला को राष्ट्रीय डी. डब्ल्यू.डी.एम. नेटवर्क से जोड़ने के लिए शिमला–चण्डीगढ–जालन्धर डी.डब्ल्यू.एम. की स्थापना के लिए महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

3. सतलुज नदी की 2001 की प्रचण्ड बाढ़ के दौरान रामपुर और रिकांगपिओ की ओ.एफ.सी. केबल बहने के कारण दूरसंचार सेवाएं अस्त–व्यस्त हो गई थीं, जिन्हें अल्प समय में ही बहाल करने के लिए इन्होंने अतिरिक्त प्रयास किए और बी.एस.एन. एल. को पुरस्कृत कराया।

4. इनके अथक प्रयास और सतत् अनुसरण से हि0प्र0 की राज्य सरकार की उपयुक्त नीति के कारण ही हि0प्र0 में पुनः स्थापना प्रभार को कम किया जाना संभव हुआ जिससे भारत संचार निगम लिमिटेड को अत्यधिक लाभ हुआ।

इस अति विशिष्ट सेवा पुरस्कार के लिए चन्द्रताल परिवार की ओर से हार्दिक बधाई।

श्री सुखदास

अध्यापक व वरिष्ठ चित्रकार

श्री सुखदास जी हिमाचल कला अकादमी द्वारा वर्ष 2003 के चित्रकला के लिए कला सम्मान पुरस्कार के लिए चयनित हुए हैं। लाहुल घाटी के यह चित्रकार किसी परिचय के मोहताज नहीं हैं। लाहुल घाटी में ही नहीं, अपितु घाटी के बाहर भी यह सुपरिचित एवं ख्यात हैं। 15 जून, 1929 को जन्मे श्री सुखदास जी को बचपन से ही चित्रकारी के प्रति आकर्षण था, समय के साथ यह रूझान बढ़ता ही गया। अपनी जन्मजात प्रतिभा के लिए पारिवारिक उत्तरदायित्व, नौकरी की व्यस्तता को भी व्यवधान बनने नहीं दिया। सोभा सिंह जी जैसे महान चित्रकार के सम्पर्क ने इनकी प्रतिभा पर चार चाँद लगा दिए।

सन् 1974 में पहली बार ज़िला प्रशासन के सौजन्य से ज़िला मुख्यालय केलंग में इनके चित्रों की प्रदर्शनी लगी। तत्पश्चात् सन् 1975 में टाउन हॉल शिमला, सन् 1999 में गेयटी थियेटर, शिमला, सन् 2000 में रशियन सैन्टर ऑफ साईंस एण्ड कल्चर के सौजन्य से देहली में, सन् 2001 में इण्डियन अकादमी ऑफ फाईन आर्टस, अमृतसर, सन् 2002 में लालचन्द प्रार्थी कलाकेन्द्र, कुल्लू में ज़िला प्रशासंन के सौजन्य से, सन् 2004 में वाइल्ड लाईफ इन्फोंमेशन सैन्टर, मनाली में इनके चित्रों की प्रदर्शनी लगी। अपने जीवन की आठ दहाईयों की दहलीज़ पर भी वे निरन्तर साधना रत हैं। उनकी इन महती उपलब्धियों के लिए चन्द्रताल परिवार की ओर से हार्दिक बधाई।

संस्थापक
स्वांगला एरतोग,
लाहुल-स्पीति में कला एवं संस्कृति उत्थान हेतु सोसाईटी (रजि०) संख्या ल.स./42/93
सोसाईटीज़ रजिस्ट्रेशन एक्ट 21, 1860

संपादक
सुश्री डॉ० छिमे शाशनी

उप संपादक
बलदेव कृष्ण घरसंगी

संपादकीय सलाहकार
बिशन दास परशीरा
अजेय कुमार

सम्पर्क :
संपादक - चन्द्रताल
151, वार्ड 1, रामशिला अखाड़ा बाजार कुल्लू
कुल्लू-175101 (हि०प्र०)
फोन: 01902-260348, 222518, 244411

अधिकृत एजेंट :
केलंग
श्री राम लाल, राम लाल की हट्टी
(शिव मन्दिर के पीछे), अप्पर केलंग,
लाहुल-स्पीति

उदयपुर
श्री शिव लाल, शिवा जनरल स्टोर,
निकट मृकुला देवी मन्दिर, उदयपुर,
लाहुल-स्पीति

चन्द्रताल त्रैमासिक सहयोग राशि :
वार्षिक : एक सौ रुपये
एक प्रति : पच्चीस रुपये

पत्रिका पूर्णत: अव्यवसायिक तथा संपादन व प्रबन्धन अवैतनिक है।

स्वंगला एरतोग सोसाईटी रजि० के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक सतीश कुमार लोप्पा द्वारा शर्मा ग्राफिक्स, सरवरी कुल्लू से टाईप सैटिंग तथा गुप्ता ऑफसेट प्रिंटर्ज़, कुल्लू द्वारा मुद्रित।

रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं, उनमें संपादकीय सहमति आवश्यक नहीं।

आवरण तेल चित्र :
सौजन्य श्री सुखदास, वरि० चित्रकार

क्रम

संपादकीय			2
पाठकीय			5
कविता	*जिन्दगी*	*सन्तोष भागसैन*	6
	बदरंग रिश्ते	*अंजू चौहान*	7
	सत्य	*कृष्णा*	8
	हंगामा मस्जिद पर	*गणेश गनी*	9
	कवि बेबस की स्मृति में	*ज्ञान चन्द चम्बयाल*	10
कहानी			
सज़ा		*कृष्णा*	11
कसौटी		*बलदेव कृष्ण घरसंगी*	15
लोकगाथा			
सज़ी राम पट्ठे की		*के० अंगरूप लाहुली*	17
क्षेत्रीय दृष्टि			
अपना अर्थ खोता जा रहा-सामा		*सतीश कुमार लोप्पा*	19
जीवनी			
मिलारेपा की जीवनी (शत्रु विनाश)		*ठिन्ले नमज्ञल, अजेय*	20
संस्कृति			
चन्द्रभागा घाटी की संस्कृति में शिवरहग.....		*विकास*	25
इतिहास			
लाहुल स्पीति देवताओं की घाटी -		*शिव चन्द ठाकुर*	26
स्वास्थ्य			
काला एवं सफेद मोतियाबिन्द - डा० रवीन्द्र शाशनी			32
लाहुल घाटी की कुछ औषधीय वनस्पतियां -		बलदेव रापा	35
देव परम्परा			
कुल्लू जनपद में नागों और अप्सराओं का वर्चस्व - तेज राम नेगी			39
व्यंग्य			
धर्म-कर्म में क्या रखा है ..... - अजय लाहुली			42
विविध			
समय प्रबन्धन ही कुंजी है		- नवङ जन्ज़िन खलेपा	44
योबरंग गांव की प्राकृतिक ..... घड़ी		- विकास	46
घटना			
दो रातें एक दिन		- राजीव गोम्थङ्पा	47

संपादकीय

परिवर्तन जीवन का धर्म है, बिना परिवर्तन के समाज और जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। समय की मांग के अनुसार समाज में बदलाव गतिशीलता का द्योतक है। परिवर्तन ही विकास का आधार है और प्रगति का सोपान भी। परिवर्तन न हो तो जीवन का विकास रुक जाएगा। समाज बदलता है और समाज में बहुत से परिवर्तन अपेक्षित हैं, हर युग में यह बात निर्विवाद सत्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। आज समय के साथ सामाजिक मूल्यों और मान्यताओं में भी बदलाव आ गया है; इसी कारण हमें पग–पग पर सामाजिक विसंगतियों का सामना करना पड़ रहा है। सामाजिक मान्यताओं और आदर्शों में सांस्कृतिक विरासत की झलक विद्यमान रहती है; किन्तु यही मान्यताएं जब स्पर्धा का रूप धारण करती हैं तो उसमें बदलाव की अनिवार्यता को नकारा नहीं जा सकता। इसीलिए ऐसी परम्पराएं जो भविष्य में समाज के लिए घातक बन जाएं, उनका त्याग करना या एक मानक निर्धारित करना अपने आप में एक प्रशंसनीय प्रयास है। ऐसा प्रयास समाज के प्रति दायित्वबोध का, जनजागृति का परिचायक होता है। आज लाहुली समाज में विभिन्न सामाजिक आयोजनों में बाहरी समाज में व्याप्त प्रथाओं का अन्धानुकरण एवं प्रदर्शन की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है, भविष्य के लिए कितना घातक सिद्ध होगा यह चिन्तनीय विषय है। ऐसी मानसिकता में परिवर्तन लाने के लिए समय की नहीं, संकल्प की आवश्यकता होती है। इसी तरह के संकल्प का उदाहरण है – गाहर घाटी में पारित प्रस्ताव। गत दिनों सम्पूर्ण गाहर घाटी के पंचायतों, महिला एवं युवा मण्डलों तथा आम जनता की एक बैठक में सर्वसम्मति से यह निर्णय लिया गया कि रल्टग्स व शादी का 5–6 दिनों तक होने वाला आयोजन तीन दिनों के अन्दर समाप्त किया जाए। शादी के समय लड़की को उपहार स्वरूप दी जाने वाली राशि सीमित किया गया है। वैसे यह निर्णय अपने आप में महत्वपूर्ण है, अन्यथा आगे चल कर यह दहेज प्रथा का रूप भी ले सकता है। इस तरह के इक्का–दुक्का प्रसंग लाहुली समाज में देखे गए हैं जो दहेज के लक्षणों की ओर इंगित करते हैं। इसी प्रकार अंग्रेज़ी शराब, बीयर आदि पर प्रतिबन्ध और बाराती पुरुष वर्ग के लिए विशेष परिधान पहनने की अनिवार्यता आदि अनेक प्रस्ताव पारित किए गए। इन निर्णयों की अवहेलना करने पर सामाजिक बहिष्कार का अधिकार महिला मण्डलों व पंचायतों को दिया गया है।

इस तरह का निर्णय सच्चे मायनों में एक क्रांतिकारी एवं अनुकरणीय पग है, जो लाहुल के अन्य समुदायों के लोगों के लिए भी प्रासंगिक एवं विचारणीय है। इस प्रकार के सामुदायिक निर्णयों द्वारा ही कोई समाज अपनी सांस्कृतिक अस्मिता को जीवन्त रख सकता है।

सम्पादक

श्रद्धांजलि

आदरणीय के॰ अंगरूप लाहुली जी हमारे बीच नहीं रहे। 27 जनवरी, 2006 को स्वल्प रुग्णता के पश्चात मनाली के मिशन अस्पताल में उन का निधन हो गया। उन की छत्र छाया से वंचित हो कर चन्द्रताल परिवार अपने को अनाथ महसूस कर रहा है। चन्द्रताल के प्रवेशांक से लेकर आज तक निरन्तर वे पत्रिका के लिए लिखते रहे हैं। 1994 से 1998 तक वे पत्रिका के सम्पादकीय सलाहकार रहे। उन जैसे प्रखर वैयाकरण, भाषाविद् एवं विद्वान लेखक का जाना लाहुल स्पीति ही नहीं, अपितु समूचे भोट जगत के लिए भी अपूर्णीय क्षति है।

के॰ अंगरूप लाहुली जी का जन्म 10 जुलाई, 1923 को लाहुल के गांव केलंग के "पड्रोङ्पा" कुल में पिता श्री कुलु एवं माता श्रीमती पलज़िन डोलमा के घर हुआ। उन के पिता जी स्वयम् एक लामा थे और अपने पुत्र को भी लामा बनाना चाहते थे अतः उन्हें शशुर गोम्पा में अपने साथ ही रखते थे। बाद में उन्होंने डिस्ट्रिक्ट बोर्ड मिडल स्कूल, केलंग में प्रवेश लिया, लेकिन शीघ्र ही स्कूल बन्द कर दिया गया। तदन्तर वे अपने भोट भाषा अध्यापक श्री लामा दोम्बा जी से शशुर में रहकर विद्यार्जन करने लगे। यहां उन्होंने भोट भाषा एवं बौद्ध पूजा–अर्चना की विधियां सीखी। उन्हीं दिनों लामा छेरिंग तण्डुप बर्चिपा से भी बौद्ध ग्रन्थों की शिक्षा प्राप्त की जिनमें रिनपोछे ज़ा–मा–तोग आदि मुख्य हैं। उन्होंने लामा छेवङ ग्वास से ज्योतिष विद्या सीखी। साथ ही वैद्यक में भी उनकी रुचि थी। लेकिन इसी बीच ठाकुर मंगल चन्द, ठाकुर शिवचन्द, डॉ0 भगवान सिंह आदि बुद्धिजीवियों की प्रेरणा पाकर वे अपने एक सहपाठी लामा कुङ्गा जी के साथ सन् 1948 में उच्च अध्ययन के लिए महाबोधि सभा सारनाथ चले गए। अंगरूप जी ने वहां पर सात आठ वर्षों तक अनेक विद्वानों एवं बौद्ध गुरुओं से शिक्षा प्राप्त की जिनमें भिक्षु धर्म रक्षित प्रमुख थे। सारनाथ में उन्होंने भोट भाषा, संस्कृत एवं हिन्दी भाषाओं का गहन अध्ययन किया। पश्चात वे बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य करने लगे।

इसी बीच लद्दाख के प्रमुख लामा कुशोक बकुला जो उन दिनों जम्मू–कश्मीर सरकार में लद्दाख मामलों के मन्त्री थे, ने महाबोधि सभा से एक हिन्दी अध्यापक के लिए सम्पर्क किया। सभा द्वारा के॰ अंगरूप जी के नाम की संस्तुति की गई और उन्होंने श्रीनगर जा कर दो वर्षों तक कुशोक बकुला जी को हिन्दी भाषा की शिक्षा दी।

के॰ अंगरूप जी की उत्कट अभिलाषा थी कि तिब्बत जा कर भोट साहित्य में उच्च शिक्षा प्राप्त की जाए। उन्होंने कुशोक बकुला जी से अपनी इस अभिलाषा के बारे में अनुरोध किया। बकुला जी ने जस्पुङ महा बिहार के अपने सहपाठी, डुल–छू–रिन–पो–छे जो पणछेन लामा जी एर्तेनी के शिक्षक थे, को इस बारे में पत्र लिखा। इस प्रकार उन्हें तिब्बत के बौद्ध मठ टशि–ल्हुन–पो के मुख्य शिक्षण संस्थान 'चे–लोब–डा' (रॉयल स्कूल) में मार्च, 1957 में प्रवेश मिल गया। यहां पर उन्होंने गेशे ङवङ–ञिमा जी से भोट व्याकरण एवं काव्य शास्त्र की शिक्षा प्राप्त की। कई अन्य गुरुओं से भी शिक्षा ग्रहण की। सन 1959 में चीन द्वारा तिब्बत पर आक्रमण के कारण उन्हें मजबूरन वापिस लौटना पड़ा और वे पुनः बनारस आ गए। यहां आ कर उन्होंने नेगी लामा तनज़िन ज्ञलछ़न जी से कई बौद्ध ग्रन्थों की शिक्षा ग्रहण की जिन में थर–ज्ञन एवं चोद–जुग

(बोधि चर्यावतार) आदि प्रमुख हैं। आठ वर्ष तक वे यहां रहे तथा सस्कृत एवं हिन्दी के अनेक विद्वानों के सम्पर्क में रहे।

मई सन 1966 में उन्हें पंजाब विश्व विद्यालय चण्डीगढ़ में भोटी भाषा प्राध्यापक के पद पर नियुक्ति मिली। यहीं पर विभिन्न पदों पर कार्य करते हुए सेंट्रल एशियन स्टडीज़ विभाग के विभागाध्यक्ष पद से वे 31 जुलाई, 1992 में सेवानिवृत्त हुए।

उन्होंने भोट व्याकरण एवं साहित्य पर अनेक पुस्तकें लिखीं। 'संभोट व्याकरण', 'वृहत् संभोट धातु व्यवस्था', 'विंशति–मूलसूत्र' 'विशंतिःसंभोट उपसर्ग प्रक्रिया', क–छेन–पअ विरचित 'काव्यादर्श के द्वितीय परिच्देद का उदाहरण', 'आचार्य थोनमी संभोट का जीवन चरित', 'खुनु लामा तनज़िन ज़ल्छन की जीवनी' तथा 'वैद्य सुन्दर सिंह का जीवन वृत्तान्त' इत्यादि प्रमुख हैं। उन्होंने भोट व्याकरण के लुप्त प्रकरणों को पुनः जीवित करने की दिशा में विशेष प्रयास किए।

वे एक सिद्धहस्त अनुवादक भी थे। उन्होंने अनेक प्राचीन बौद्ध ग्रन्थों का भोटी से हिन्दी में और हिन्दी की अर्वाचीन पुस्तकों का भोटी में अनुवाद किया है। उन के द्वारा अनूदित ग्रन्थों में 'आचार्य दीपंकर श्रीज्ञान विरचित, 'विमल रत्नलेख' तथा 'बोधि पथ प्रदीप', आचार्य चोङ–ख–पा विरचित 'बोधि पथक्रम पिण्डार्थ', महामना नेगी लामा विरचित 'रत्न प्रदीप नामक बोधिचित्त की स्तुति' तथा 'आर्यतारानमस्कारैकविंशति स्त्रोतम्', रवीन्द्र नाथ टैगोर विरचित 'गीता. जलि' एवं 'वाजपेई जी की इक्यावन कविताएं' आदि शामिल हैं।

प्रखर वैयाकरण, भाषाविद् एवं अनुवादक होने के साथ–साथ लाहुली जी एक विद्वान सांस्कृतिक शोधकर्ता भी थे। उन्होंने लाहुल स्पीति, ज़ंस्कर, लद्दाख, किन्नौर आदि क्षेत्रों का न केवल व्यापक भ्रमण किया बल्कि वहां की संस्कृति का व्यापक अध्ययन भी किया। कम से कम अस्सी–नब्बे शोध निबन्ध विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। लाहुल के पटन क्षेत्र में प्रचलित घुरे गीतों का हिन्दी पाठक वर्ग से परिचय कराने का श्रेय भी के॰ अंगरूप लाहुली जी को ही जाता है। लाहुल के ही गाहर घाटी के लोक गीत 'ग्रेग्स' का भी उन्होंने संग्रह किया है। उन के बहुत कम हिन्दी पाठक जानते होंगे कि वे भोट भाषा जगत में कविताएं भी लिखते थे।

इतने बहुआयामी प्रतिभा एवं व्यक्तित्व के स्वामी के॰ अंगरूप लाहुली जी को अहम् कभी छू नहीं पाया था, वे विनम्रता, करुणा एवं स्नेह की प्रतिमूर्ति थे जो जीवन पर्यन्त कर्मठ एवं रचनाशील रहे।

उन्हें हमारी हार्दिक श्रद्धांजलि !!!

(शोकाकुल चन्द्रताल परिवार)

सम्पादक महोदया,

चन्द्रताल का 22वां अंक प्राप्त होते ही खुशी की लहर दौड़ गई। लेकिन पूरी पत्रिका का जब गहन अध्ययन किया तो पाया कि प्रूफ रीडिंग और मुद्रण के दौरान लापरवाही बरती गई है। खैर हर्ष का विषय तो यह है कि चन्द्रताल में कुछ न कुछ नयापन लाने का भरसक प्रयास किया जाता है। पूरी टीम को शुभकामनाएं। वर्ना बड़ी-बड़ी हिन्दी पत्रिकाओं को बन्द होते देखा गया है। कारण है पाठकों तथा लेखकों की बेरुखी। आज अंग्रेज़ी का ज़्यादा बोल-बाला है। अच्छी बात है। एक अन्तर्राष्ट्रीय भाषा का ज्ञान होना भी बहुत-बहुत आवश्यक है। लेकिन अपनी भाषा की बलि दे कर नहीं।

लेखकों से मेरा अनुरोध है कि स्तरीय लेख भेज कर इस साहित्यिक यात्रा में अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर समाज में कुछ योगदान अवश्य दें। 'चन्द्रताल' के फैलाव को केवल लाहुल तक ही सीमित रखना पत्रिका के साथ अन्याय होगा। इसे हिमाचल प्रदेश की प्रसिद्ध पत्रिका के रूप में विकसित होना है। पाठकों का योगदान बराबर का है। इसका दायरा बढ़ाना हम सब की ज़िम्मेदारी है।

- गणेश भारद्वाज

सम्पादक महोदया,

चन्द्रताल पत्रिका त्रैमासिक से खींचते हुए छः मासिक फिर और रबड़ की तरह खींच कर वार्षिक निकल रही है, क्या कारण है इसके पीछे? क्या इसके प्रबन्धन में कुछ कमी आ गई है या फिर संस्था के प्रबन्धक मण्डल की पूर्ववर्तिताएं बदल गई हैं। यह भी हो सकता है कि पत्रिका को आवश्यक लेखन सामग्री ही प्राप्त नहीं हो रही हो। लाहुल जैसे ज़िला जहां साक्षरता दर 90 प्रतिशत है व बड़े-2 कार्यअधिकारियों, अध्यापकों व बुद्धिजीवियों का भण्डार है वहां लेखन सामग्री का अभाव! यह बात कुछ असहज लगती है। या फिर यह पत्रिका के प्रकाशन की लागत को जुटा पाने की असमर्थता है। यह बात भी अजीब सी लगती है क्योंकि एक लाहुली के पास पैसे की कमी, यह हो ही नहीं सकता। हां! यह पैसा उसकी जेब से निकालना ज़रूर मुश्किल है पर नामुमकिन नहीं। क्योंकि उसे अभी कुल्लू में महलनुमा मकान भी तो बनाना है। हां यह हो सकता है कि पाठक ही कम रह गए हों जिससे पत्रिका का प्रकाशन आर्थिक रूप से अव्यवहारिक हो गया हो? ऐसे कितने बहाने हैं जिसके चलते यह पत्रिका कछुए की चाल चल रही है। पर सब बात की एक बात यह है कि समाज जितना भी प्रगतिशील होने का लबादा ओढ़े अभी हमें बहुत दूर जाना है।

- कृष्ण

ज़िन्दगी

1 उम्र गुज़र जाएगी ज़िन्दगी की तलाश में,
मगर ज़िन्दगी हमारे करीब न आएगी,
हमें ही ज़िन्दगी को तलाशते-तलाशते,
मौत के करीब जाना पड़ेगा,
जाने कितने रंग दिखाएगी,
किससे जुदा कर किससे मिलाएगी ज़िन्दगी।

3 इस अनमोल ज़िन्दगी का,
हम मोल नहीं जानते,
ज़िन्दगी की तलाश करते यूं,
गुज़र जाएगी बेमोल ज़िन्दगी,
जाने कितने रंग दिखाएगी,
किससे जुदा कर किससे मिलाएगी ज़िन्दगी।

4 ज़िन्दगी किस मुकाम पे ले आई हमें,
समन्दर में तूफां तो बहुत आए यहां,
मगर उम्मीदों की कश्ती को,
खेते ही चले गए हम,
जाने कितने रंग दिखाएगी,
किससे जुदा कर किससे मिलाएगी ज़िन्दगी।

सन्तोष भागसैन, बी.ए.
गांव मालीपत्थर (रायसन)

बदरंग रिश्ते

ख्यालों के कटघरे में खड़ी - खुद को बदनाम समझती हूं
अनकही नहीं, बिन देखी नहीं
हूं मैं गवाह इन बदरंग रिश्तों की राह
घुले नहीं, मिले नहीं - कहां गये वो रिश्ते?
यह प्रश्न शिथिल करता मन को
अकेला, बेबस, बेसुध हो रहा है इन्सान
मरुस्थल में बैठा याद कर रहा है अपनी उस
खोई घंटी की धुन
बाप ने बेटी को ..... बेच,
भाई ने बहन को ..... बदनाम,
बहू ने सास को ..... मार,
मां ने बेटे को ..... मार डाला
बदरंग रिश्तों का बदनाम बादशाह !
यही तो रह गये थे पवित्र
वो भी बन गये बदरंग, बेरंग
खून का पवित्र रिश्ता हुआ बेढंग
बेसुध, खुद का खून खौलने लगता है
क्यों बन गया है मानव शैतान
अपनों के साथ बनता है हैवान
क्या सदा के लिये सो गया है भगवान्
जो इतना जाग उठा है इसान?
हर नाता है अपना बन्धन लिये
क्यों पवित्रता को अपवित्र है करता
मानव ! अपनी सीमा में रह
रिश्तों की डोर में बंध
ऐ मानव ! रिश्तों से खिलवाड़ न कर
खुद मानव को ही करना होगा उत्थान
पतन की राह चल कहलवाना न खुद को दानव
कहलवाना होगा - मानव
बदनाम, बेनाम क्यों?

- अंजू चौहान

"सत्य"

जीवन सिर्फ एक गुब्बारा है,
हवा–डोर ही उसका सहारा है।
जब तक है हवा भरा,
तब तक है गगन भी धरा।
कभी चाहत होती है बादलों को छूने की,
फिर चाहत होती है संग–संग उड़ने की।
छू ही लेता गगन, पर किस्मत तो देखो,
अपना ही हिस्सा डोर ने किया दगा तो देखो।
अभी मदमस्त था, सोच मेरा यह गगन सारा,
अब शोकाकुल है जब डोर रहा न मेरा।
ज्यों–ज्यों धरती करीब आ रही,
हर भेद उस पे खुलती जा रही।
डोर क्या नहीं मेरा, मैं तो खुद नहीं मेरा,
खिलौना मैं किसी का, देखा तो सब कुछ वह हारा।
रंग रूप अलग था उसका पर वही चाहतें सारी,
मैं सोच रहा था! कैसा यह जीवन, कैसी यह दुनियादारी।
अब मुझमें हवा कम, सोच भरी थी ज़्यादा,
जीना सिर्फ जीना नहीं भूल गया था मरने का वादा।
तभी एक हवा का झोंका मुझे लुढ़का ले गई गलियारे में,
उस अनजान–सुनसान खामोश स्याह अंधियारे में।
जहां लिखा था आगे का किस्सा,
जहां पड़ा था मौत का हिस्सा।
अब मैं जानकर भी अनजान सा था,
कुछ शेष न था फिर भी जीने का अरमान सा था।
अपनी नहीं उस उड़ते गुब्बारे की याद आ रही थी,
जिसमें मेरी जवानी की यादें अंगड़ाई ले रही थी।
धीरे–धीरे मेरे भीतर की हवा कम होती जा रही थी,
मेरी आंखें गुज़रे ज़माने के लिए रोती जा रही थी।
फिर किसी ने मुझे सुई चुभो दी, एक आवाज़ हुई,
वह आवाज़ उस हवा की थी, जो फिर सृष्टि में विलीन हुई।
अभी एक नन्हा गुब्बारा गगन में उड़ा जा रहा था,
शायद फिर से मेरा प्राण, उसी में भर दिया गया था।

— कृष्णा

हंगामा मस्ज़िद पर

तुम अपने ज़ुल्मों को गिनो कभी तो
मेरे ज़ख्मों का शुमार हो जाएगा।

इस दश्त में राह मिले कभी तो
मंज़िल का पता ढूंढ लिया जाएगा।

बहुत हंगामा हो गया मस्ज़िद टूटने पर अब तो
कब दिलों के लिए भी कुछ किया जाएगा।

नींद आए इन आंखों में कभी तो
वो पास नहीं मेरे, सपनों में देखा जाएगा।

रूठा है 'गनी' ख़फा नहीं अभी तो
उसे मनाने का एक और मौका दिया जाएगा।

बहुत हो गई चाँद-सितारों की बातें अब तो
उन के सितमों का जिक्र कब किया जाएगा।

किताबों की बातें करना यहां बेकार है अब तो
कब तक सूखे पेड़ों को पानी दिया जाएगा।

न पढ़ाओ दैर और हरम का फर्क अब तो
नई नस्ल को नफ़रत से यूं बचाया जाएगा।

आप तो वफ़ा की बातें किया करो कभी तो
जहां में वफ़ाई को यूं जिन्दा रखा जाएगा।

आ के दो पल इस दिल को बहलाओ कभी तो
यूं रो रो मन को कब तक हल्का किया जाएगा।

मोहब्बत के नग़मे हवा में बिखेरने हैं अब तो
यूं कायनात को तबाही से बचाया जाएगा।

- गणेश 'गनी'

मायने : शुमार - गिनती, दश्त - मरूस्थल, दैर और हरम - मन्दिर और मस्ज़िद, कायनात - दुनिया, संसार

कवि बेबस की स्मृति में

वेद शास्त्र गीता महाभारत का,
अनुवाद पहाड़ी में तुमने किया,
क्या यह कम था बेबस जो तुमने
एक नया रास्ता दिखा दिया।

धन्य है तुम्हारी मेहनत बेबस
जो मुश्किल काम तुमने सुलभ किया
मन में पीड़ा इतनी है कि तुम
और तुम्हारी प्रतिभा को,

क्यों?
समय पर नहीं याद किया
तुम्हीं तो थे.....
बिखरती जा रही संस्कृति के रचयिता

तुम संस्कृति व साहित्य को संजोए रहे बेबस
इतना इतिहास लिखा इतना साहित्य लिखा
फिर भी रहे बेबस,
समाज सोया रहा हम सोये रहे

आपका लेखन, साहित्यिक समाज तक न पहुंचा सके
हम भी थे बेबस, तुम भी थे बेबस।
दुःख इतना रहा कि.....
जालफू रहे, प्रार्थी रहे और रहे मिश्रा,

विधायक रहे, मंत्री रहे, पहाड़ी भाषा के रचयिता रहे
लेकिन तेरी लेखनी को क्यों उन्होंने बिसुरा,

सारथी थे, सहयोगी थे नेता व मंत्री थे प्रार्थी
इन सभी की सफलता में,
तुम्हीं तो थे सारथी
परन्तु धन्य हो .....

डॉ गौतम को,
एकत्र की तेरी कतरें
सब संजोया तेरा धन बेबस
यह तेरी ही प्रेरणा थी, जो,

साहित्य प्रेमियों को खींचती रही बेबस
देश से, प्रदेश से जिज्ञासु आए,
तेरी खोज में बेबस
खुशी इस खुदा के बन्दे को हुई.....

फिर याद आई तेरी बरबस।
बना ग्रन्थ,
बना इतिहास,
आए विष्णु शास्त्री (राज्यपाल)

विमोचन किया तुम्हारी ग्रन्थावली का
यही तो थी तुम्हारी इच्छा
याद आए;
आपको,

मिश्रा, याद आए प्रार्थी
कुल्लू के नव निर्माण में,
ये तीनों ही तो थे
सारथी।

समय रहते जल्द न हो सका,
तुम भी थे बेबस, हम भी थे बेबस।
फिर भी है खुशी इस बात की,
तुम भी हुए सफल,

हम भी सफल।
तुम्हारी स्मृति में मेरी,
यही श्रद्धा सुमन,
है बेबस।

श्री ज्ञान चन्द चम्बयाल
हिमानी कुँज, शास्त्री नगर कुल्लू (हि0प्र0)

सज़ा

– कृष्णा

बस यहीं तक, अब और नहीं भागा जाता! हाँफते-हाँफते सांस उखड़ रहा है। मेरे कदम अब मुझसे विद्रोह करने लगे हैं। मन भी सीने के किसी कोने में दुबक कर रह गया है और मेरा मस्तिष्क किसी तेज़ चलते पहिए की तरह घूमता ही जा रहा है। गुज़रे सालों के पन्ने पलटता जा रहा है। वह दिन भी क्या दिन थे जब धरती-गगन में कोई फर्क नज़र नहीं आता था। चलते थे तो कदमों के भार तले पत्थर भी पिस जाते थे। गम क्या होता है और हार क्या? ये शब्द तो मैंने जैसे अपनी ज़िन्दगी की डिक्शनरी से ही निकाल बाहर किए थे। खुशी और जीत हर कीमत पर हासिल करना, यह मेरे शौक थे। वक्त मानो मेरे इशारे पर चलता और रुकता। जब गरज कर बोलता तो घरों की नींव हिल जाती। डर मानो शब्द बन कर सिकुड़ जाता मेरे आगे। उन दिनों मैं कॉलेज में पढ़ रहा था। अपने रौब और उस्तादी के चलते जल्दी ही

भाई के नाम से भी चर्चित हो गया। अपने सीनियर्ज़ को मुट्ठी में लिए घूमता। अध्यापकों पर हुकूमत चलाता। कई बार उन्हें डरा-धमका कर विद्यार्थियों के आगे ताकत का प्रदर्शन किया करता। हर वह काम जो मुझे ताकतवर दिखाए मैं करता, फिर चाहे खेल हो या लड़ाई। कोई अगर मुझसे आगे निकलने की कोशिश करता तो मैं पागल सा हो जाता।

अमीर बाप की इकलौती सन्तान होने का इतना तो फायदा था कि मैं हर चीज़ खरीद लेता जिसे पसन्द करता। मेरी नज़र में हर चीज़ बिकाऊ थी। मेरे पापा भारत में नहीं रहते थे। वह सात समन्दर पार से मेरे लिए लाखों रुपये भेजते और मैं मौज-मस्ती में खर्च करता। यह मेरे पापा की प्रॉब्लम थी कि उन्हें मेरे बारे में कुछ पता न चलता था। मेरा हर वह काम करने को जी चाहता जो बुरा है और कर गुज़रता। इसे मैं शान और हिम्मत का दर्जा दिया करता था। मगर यही बुराई मुझे ऐसे भंवर में फंसा गई जहां से मैं कभी निकल न पाया। एक बार मेरे कुछ दोस्त चोरी करने की योजना बना रहे थे। लाखों रुपये होते हुए भी सिर्फ रोमांच के लिए मैं भी उनमें शामिल हो गया। काफी देर सोच विचार के बाद यह तय रहा कि चोरी कॉलेज के बाहर चाय वाले की दुकान में की जाए। इसकी एक अहम वजह यह थी कि वह गरीब था। वैसे तो उसे पता नहीं चलेगा और अगर हमें पहचान भी ले तो अपनी हैसियत के मुताबिक थाने से आगे नहीं जा पाएगा और फिर बात वहीं रह जाएगी। ईज़्ज़त भी बनी रहेगी, रोमांच भी कामयाब रहेगा। बात पक्की हो गई। संडे की रात थी हम चार दोस्त तैयार थे। पहले क्लब गए और वहां से सीधे चाय की दुकान। हम सब नशे में थे और इस घिनौने काम का आग़ाज़ करने जा रहे थे अंजाम सोचे बगैर। सुनसान सड़क पर हमारे सिवा कोई न था। हमारे लड़खड़ाते कदम रात की खामोशी भंग कर रहे थे।

रात गहराई थी, शायद दो बज रहे थे। चांद ढल

चुका था। ठंडी हवा के झोंके नशे के सरूर को ठंडा किए दे रहे थे। दुकान सामने थी। हमारी मंज़िल! सब यूं चौकन्ने हो रहे थे मानो सरहद पर जंग के लिए तैयार सिपाही। मैंने टॉर्च की रोशनी दरवाज़े पर लगे ताले की ओर कर दी। विजय जो उस काम में माहिर था, उसके छूते ही ताला किसी चमत्कार की तरह खुल गया। ताले के खुलते ही हम दोनों अन्दर और बाकी दो को वहीं तैनात रहना तय हुआ। मेरे अलावा वे तीनों पुराने खिलाड़ी थे। इसी बूते पर वे अमीरों की तरह ऐश किया करते थे। अगर कोई नया था तो वह था मैं। मगर आत्मविश्वास से परिपूर्ण इस कार्य का अभिनेता तो मैं ही था। अन्दर गहरा अन्धेरा छाया था। कुर्सियां और मेज़ दीवार के साथ कोने में सिमटे पड़े थे। मेरे और विजय के अलावा वहां चूहे भी मौके का फायदा उठा रहे थे। मैं बड़ी मुस्तैदी से टॉर्च की रोशनी यहां-वहां कर रहा था। विजय भी कम फुर्ती वाला न था। वह तो हर चीज़ को टटोल-टटोल कर देख रहा था। उसके हाथ इतने सधे थे कि बेमतलब की चीज़ों की तरफ बढ़ते भी न थे। उसमें इस फुर्ती की वजह शायद उसकी ज़रूरत थी। मैं सामान से टकराता लड़खड़ाता हुआ ढूंढता बढ़ता जा रहा था। एक-एक चीज़ को गौर से देखता, क्या पता क्या मिले, रोमांच के सागर में हिलोरे खाने लगता। पलक झपकते ही हमने कोना-कोना छान मारा। और कुछ हासिल न हुआ। दुकान के दो कमरे थे। एक में निराशा के बाद दूसरे की आशा अभी बाकी थी। विजय ने दूसरे कमरे के ताले में भी अपना जादू चलाया। दरवाज़े के खुलते ही हम आंधी की तरह भीतर प्रवेश कर गए। कमरा छोटा सा था। टॉर्च की रोशनी जहां-तहां फैलाई। अपने जालों में बैठे मकड़ियों में हलचल सी आ गई। सीलन और बदबू भी यहां अपनी मौजूदगी का आभास करा रही थी। चीनी और चायपत्ती के ढेर लगे थे। विजय के कदम ज़मीन पर ऐसे पड़ रहे थे मानों पैरों में स्प्रिंग लगे हों। बड़ी सावधानी से वह एक-एक कोना देख रहा था। मैंने दरवाज़े पर ही रुकना मुनासिब समझा। कुछ देर में विजय मुझे धीमे स्वर में पुकारने लगा। मैं रोमांच से भर उठा। उसकी आवाज़ में खुशी साफ झलक रही थी। तेज़ कदमों से मैं अन्दर चला गया जहां विजय छोटा सा संदूक लिए मुस्कुरा रहा था। संदूक खुला था शायद दुकानदार को अपनी सुरक्षा पर पूरा भरोसा था। दस, बीस और पचास के नोटों से सन्दूक भरा पड़ा था। इतने रुपये तो मैं भिखारियों को दिया करता था। मगर फिलहाल तो यह चालीस चोरों के खज़ाने से भी कीमती था हमारे लिए। रुपये मिलने के बाद हमारा वहां ठहरने का कोई मतलब न था। तूफान की तरह हम उस कमरे से बाहर निकले ही थे कि हमारे

कदम वहीं ठिठक कर रुक गए। बाहर शोर-शराबा हो रहा था निश्चित ही किसी ने बाहर खड़े हमारे दोस्तों को देख लिया था। मैं धीरे से शटर के पास पहुंचा तो क्या देखता हूं कि वे दोनों वहां से फरार हैं और न जाने कहां से दुकानदार टपक पड़ा था। हाथ में लाठी लिए बदहवास सा इसी ओर आ रहा था। वह दिखने में किसी पहलवान से कम न था। विजय के यह सब देखकर पसीने छूट रहे थे। हम चुपके से दीवार के कोने से सट गए ताकि वह अंधेरे में हमें देख न पाए। मैं डरा नहीं था फिर भी जानबूझ कर विजय को भी अपने साथ फंसाना नहीं

चाहता था। वहीं छुपकर बैठने में भलाई थी।

दुकानदार लाठी से हर कोने में आवाज़ करने लगा। कुछ ही देर में मैं और विजय अन्दर वाले कमरे में चले गये। मौका पाकर हम वहां से खिसकने लगे। बाहर निकलते ही जैसे हमारे पैरों में पर लग गए मगर शायद किस्मत को कुछ और ही मंजूर था। विजय आसानी से भागने में सफल हो गया मगर मैं दुकानदार के हत्थे चढ़ गया। शायद मजबूरी ने उसे अद्‌भुत शक्ति प्रदान कर दी थी जो वह हवा को रोकने में भी समर्थ हो पाया। खुद को छुड़ाने के प्रयास में मेरी उससे हाथापाई हो गई। इसी बीच उसने एक भयंकर भूल कर दी। उसने कसकर लाठी का प्रहार मुझ पर किया। मैं गुस्से में पागल सा हो गया। मैंने बेतहाशा लातों और घूंसों से उसकी खबर ली। चीख-पुकार सुन कर वहां भीड़ जमा हो गई। मगर बेजान बुतों की तरह। सभी चुपचाप नज़ारा देख रहे थे। मैं अब भी उसे पीट रहा था तभी भीड़ में से एक कमज़ोर सी लड़की आ कर मुझे रोकने की कोशिश कर रही थी। लेकिन गुस्से में मैं अन्धा हो गया था। मैंने उसे धकेल दिया। वह लड़की मेरे कदमों में गिड़गिड़ाने लगी फिर भी मैं न पिघला। न जाने क्यों मैं इतना निर्दयी हो गया था। बहशी बनकर मैंने पीट-पीट कर दुकानदार की जान ले ली। फिर भी मैं उसकी लाश को तब तक पीटता रहा जब तक पुलिस आकर मुझे गिरफ्तार न ले गई। फिर शुरू हुआ सबूतो और गवाहों का सिलसिला। सबूत और गवाह उस लड़की के सिवा कोई न था। वह लड़की दुकानदार की बेटी थी। मेरे फरमाबरदार उसे हर तरह से चुप कराने में असफल को गए। लालच-धमकी सब उस पर बेअसर थी। न जाने कहां से उस लाचार लड़की में इतनी हिम्मत समा गई थी कि वह काल से दुश्मनी निभाने को भी तैयार थी। बात अदालत तक जा पहुंची और केस लड़ने के लिए उसने अपना एकमात्र सहारा वह दुकान भी बेच दी। मै जानता था इन सब का उसे कोई फायदा नहीं होगा। सिर्फ अपनी गवाही के बिनाह् पर वह यह केस हरगिज़ नहीं जीत सकती। फिर क्यों वह अपनी ज़िन्दगी की दुश्मन बन रही है, तरस आ रहा था उस पर। मैंने भी शहर के बड़े वकील को अपना केस सौंप दिया जो सच को झूठ और झूठ को सच बनाने में माहिर था।

बात तो धुंआ होती है फैलनी ही थी। यह बात मेरे पापा तक जा पहुंची और पापा भारत आ पहुंचे। पापा को मुझे जेल में देख कर दुःख से ज़्यादा हैरत थी। "पापा आप यहां" मैं खुशी से उछल पड़ा। अब केस लड़ने की क्या ज़रूरत। पापा के रूआब और उनके नाम को सुनकर अच्छे से अच्छे फैसले बदल दिया करते थे। मगर पापा का फैसला क्या था यह सुन कर मैं अवाक् रह गया। सिर्फ एक सवाल उन्होंने किया था मुझसे - सौम्य सच कहना, क्या तुम कसूरवार हो? क्या तुम जिम्मेवार हो इस पाप के? मैं मुकर न पाया और मेरी आंखें अपने आप ज़मीन को ताकने लगीं। ऐसा देख पापा का हाथ किसी करंट युक्त बिजली की तरह मेरे गालों से टकराया तो पल भर के लिए ऐसा लगा जैसे मेरा तो फ्यूज़ ही उड़ गया। सारा तन-मन क्रोध और लज्जा से झनझना गया।

पापा के अल्फाज़ मेरे लिए ज़हर उगलने लगे "क्यों? क्यों किया ऐसा सौम्य? आखिर क्या कमी थी तुम्हें। कौन सी ज़रूरत थी जिसने ऐसा करने पर मज़बूर

किया। पापा का चेहरा भट्ठी में सुलगते अंगारे की तरह दहकने लगा। जिस्म की नसें खून से पत्थर बन कर अकड़ गई। यह रूप मैंने पहले कभी नहीं देखा था। मैं उनके होंठों पर हमेशा अपने लिए दुआ सुनता आया था मगर आज सिर्फ बद्दुआ निकल रही थी मेरे लिए।

"ज़िन्दगी छीनने का हक तुम्हें नहीं है सोम्य। दूसरों की तकदीर बिगाड़ने वाले कभी खुश नहीं रह सकते। काश! तुमने मेरे भेजे रुपयों से कुछ अच्छा काम किया होता तो आज मैं गर्व से तुझे सीने से लगा रहा होता। तुमने अपनी आज़ादी का गलत फायदा उठाया। तुमने मुझे अपनी ही नज़रों में शर्मिन्दा कर दिया बेटे। तुम क्यों भूल गए, गुनाह सिर्फ गुनाह को जन्म देता है और जो तुमने किया है उसको माफ नहीं किया जा सकता। पापा किसी लुटे हुए शराबी की तरह अपने बाल नोच कर सिसकियों में डूब गए। मैं वहां बुत बना एकटक सलाखों को निहार रहा था। पापा फिर संभल कर मेरे कन्धे पर हाथ रखकर बोले, "परिणाम क्या मिला तुम्हें यह झूठी खुशी या यह सलाखें !" मैं इन बातों से चिढ़ सा गया और बेपरवाह होकर मुंह फेर कर बैठ गया। पापा तेज़ कदमों से बाहर निकल गए लेकिन ज़रा आगे जाकर फिर मुड़ कर कहने लगे - "तुम्हें इन बातों का कोई असर नहीं पड़ेगा, तुम तो खुद को खुदा समझ बैठे हो। लेकिन याद रखना बेटे खुदा की नज़र में कोई अमीर गरीब नहीं होता, वह हर गुनाहगार को सज़ा देता है और उसकी सज़ा बहुत भयानक होती है। एक पल के लिए मैं सिहर उठा। यह वाक्य मेरे रोम-रोम को सन्न कर गई। पापा ने निराश होकर कहा - "मैं सिर्फ दुआ कर सकता हूं तुम्हारे लिए।"

मैं जो अब तक खामोश था बोल उठा - "तो आप मेरी मदद नहीं करेंगे।" जवाब किसी खंजर की तरह मेरे कानों से होता हुआ दिल में चुभ गया। जवाब था - "नहीं" इतना कहकर वे चले गए।

कार्यवाही शुरू हो गई। मेरे वकील ने सवालों का ऐसा गुच्छा तैयार किया कि लड़की उलझ कर रह गई। वह निर्दोष आंखों से कभी वकील तो कभी जज की तरफ देखती, असहाय होकर चीख पड़ती कभी। घृणा से मेरी तरफ घूरती। उसकी थकी आंखों से झर-झर करते नीर मेरे मन को तेजाब की तरह जलाने लगे। मेरी तरफ उंगली उठा मुझे डरा देती। "यही है वो" "इसी ने मार डाला बाबू को" यह कहते-कहते वह अचेत हो जाती और यह दृश्य मेरी चेतना को कोसता रहता। फिर भी मैं खामोश था अपने स्वाभिमान या अभिमान की खातिर। कानून के पलड़े को हमारे शब्दों-सवालों की तादाद ने भारी कर दिया और जज साहब ने कानून का चश्मा पहन लिया जो सच को महसूस तो करती है मगर देखती नहीं।

मैं बाइज्ज़त बरी हो गया। फैसला सुन वह लड़की होशो-हवास खो बैठी। ठहाके लगाती गिरती संभलती वहां से भाग गई। मेरे दोस्तों की खुशी का ठिकाना न था। सबने मुझे बाहों में उठा लिया।

❋❑❋❑❋❑❋

सामूहिक संस्थाओं में भागीदारी के प्रति उदासीनता

यह उदासीनता प्रगति का द्योतक है या फिर सामाजिक ह्रास के व्यवस्थित होने की शुरुआत?

बलदेव कृष्ण घरसंगी

लाहुल की अर्थव्यवस्था का स्तम्भ संयुक्त परिवार रहा है। और इसी कड़ी में लाहुली बुद्धिजीवियों द्वारा अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने हेतु विभिन्न संस्थाओं, परिषदों व सभाओं का गठन समयानुसार होता रहा है चाहे वह लाहुल एवं स्पीति म्यूटीलियर परिषद हो, लाहुल कुठ ग्रोवर्ज़ एसोसिएशन हो या फिर साठ के दशक में लाहुल आलू उत्पादक सहकारी सभा या फिर सत्तर के दशक में हाप्स उत्पादक सहकारी सभा का गठन हो। यह सभी कार्य एक सोची समझी रणनीति के तहत ना होकर एक प्राकृतिक सहज प्रक्रिया का परिणाम था जो कि उस समय के सामाज़िक व आर्थिक व्यवस्था में ही निहित था। समय के साथ लाहुल की अर्थव्यवस्था भी बदली और इसके साथ सामाजिक तथा नैतिक मूल्यों में भी भारी परिवर्तन हुआ। संयुक्त परिवार विघटित होकर *छद्म संयुक्त परिवार** का रूप लेने लगे जिससे प्रति व्यक्ति खर्चा चार गुणा बढ़ गया जिसके चलते प्रति व्यक्ति खर्चो का बोझ भी बढ़ता चला गया। बाज़ार व्यवस्था से उत्पन्न कठिनाइयों को सुव्यवस्थित करने के लिए इन परिवारों को चार गुणा अधिक परिश्रम करना पड़ रहा है। वर्तमान में अगर कृषि व नौकरी से आय बढ़ी है तो वहीं दैनिक खर्चो में भी बढ़ोतरी हुई है। जहां सामान्य जीवन स्तर सुधरा है तो वहीं प्रति व्यक्ति उत्कृष्ट समय में भी कमी आई है।

अब यह बात उठती है कि उपरोक्त विषय का आम लाहुली का सामूहिक संस्थाओं में भागीदारी के प्रति उदासीनता से क्या सरोकार। लेकिन यह भी सच है कि लगातार पिछले दो वर्षो से एल०पी०एस० के साधारण अधिवेशन में खासकर पटन घाटी के लोगों द्वारा नगण्य उपस्थिति दर्ज करना एक शोध का विषय बन गया है जबकि पूर्व सहकारी सभाओं के गठन की प्रक्रिया इसी घाटी से ही प्रारम्भ हुई। आज आलम यह है कि पिछले दो वर्षो से इस घाटी से निदेशक पद का उम्मीदवार नहीं होने से यह पद खाली पड़ा है। यह लोगों द्वारा एल०पी०एस० के प्रति उदासीनता ना होकर सामूहिक पचड़े से बचने का बहाना ही है, क्योंकि उन्हें लगता है कि एक या दो व्यक्ति बदलने से व्यवस्था नहीं बदलेगी बल्कि पूरी व्यवस्था को ही खंगालना पड़ेगा। लेकिन इतना माद्दा किसी में भी नहीं है। इसी प्रकार जो भी गांव, कोठी व ज़िला स्तर के परिषद् व संस्थाएं हैं छद्म रूप में ही चल रहे हैं। सामूहिक सरोकार से हाथ खींचकर व्यवस्था पर दोषारोपण करके एक नागरिक अपने कर्तव्य से विमुख नहीं हो सकता। हर कोई कहता सुना जा सकता है अरे! क्यों फंस रहे हो इस पचड़े में, भई अपना काम करो। ये संस्थाएं ऐसी ही है और ऐसी ही चलती रहेंगी। परन्तु किस कीमत पर? इतने पढ़े लिखे व विकसित अर्थव्यवस्था होते हुए भी यह समाज नेतृत्व विहीन क्यों होता जा रहा है? हर तरफ एडहोकिज़म का आलम है, व्यवस्था व संस्थाएं चरमरा गई हैं, समाज का मूल रस निचुड़ता जा रहा है और हम इसके मूकदर्शक बन कर रह गये हैं। छद्म संयुक्त परिवार व्यक्तिगत स्वार्थ को और आगे ले जाकर हम में से हर एक को स्वार्थी बनाता जा रहा है। जहां विकास की परिभाषा सिकुड़ कर व्यक्ति व परिवार विशेष तक सिमट गई है और स्वार्थपरता रिवाज़ हो गया है।

क्या इसका अर्थ हम यह निकालें कि हमने पूंजीवादी उद्योग प्रणाली में प्रवेश कर लिया है। अगर ऐसा है तो विकसित देश जैसे जापान, हॉलैंड व जर्मनी में कृषि विपणन, सहकारी सभाएं व व्यापारिक गिल्ड ही क्यों करते हैं? हमारे देश में गुजरात ऐसा उदाहरण है जो कि विपणन व औद्योगिकी में विकसित होने पर भी अमूल जैसे सहकारी आन्दोलन में निहित कार्यप्रणाली को अपना कर विश्व के अग्रणी आहार कंपनियों को कड़ी टक्कर दे रहा है।

इस प्रकार यह कहना कि हम बाज़ार व्यवस्था में प्रवेश कर चुके हैं या फिर संयुक्त परिवार में विघटन होने से सामूहिक संस्थाएं भी छद्म संयुक्त व्यवस्था का शिकार हो रही हैं निश्चय ही गलत है। बल्कि अब बाज़ार व्यवस्था व छद्म संयुक्त परिवारों के स्थापित होने के पश्चात यह ज़रूरी हो जाता है कि सामूहिक संस्थाओं को और सुदृढ़ किया जाए ताकि आय में वृद्धि के साथ बढ़े हुए अतिरिक्त आवश्यक खर्चों को भी काबू में लाया जा सके। इसके लिए हर एक को अकेले इस जिन्न से लड़ने से अच्छा है कि इससे सामूहिक रूप से निपटा जाए। वर्तमान उदासीनता व्यावहारिक न होकर समाज में पनप रहे एक ऐसे मानसिकता को दर्शाती है जहां सामाजिक, आर्थिक व नैतिक मूल्यों का ह्रास ही निश्चित है जिससे हमारी व्यवस्था उन्नति की बजाए अवनति की ओर अग्रसर होगी।

अगर उपरोक्त बात सच है तो कैसे हम इस अवनति से लड़ें ताकि छद्म प्रगति को सही दिशा दे सकें। सामूहिक संस्थाओं के प्रति उदासीनता जहां हमारे समाज में पनप रहे ह्रास को दर्शाती है तो वहीं इसकी ज़िम्मेदारी संस्थाओं के प्रतिनिधियों को तो जाती ही है वहीं इससे जुड़े सदस्यों की ज़िम्मेदारी भी कम नहीं आंकी जा सकती। अगर वर्तमान प्रगति को सही दिशा देनी हो तो समाज में जितनी भी जन संस्थाएं हैं उनमें पारदर्शिता, परिपक्वता, दृढ़ता, प्रगतिशीलता व आधुनिक प्रबन्धन प्रैक्टिसीज़ को अपनाना पड़ेगा। किसी भी प्रकार के राजनैतिक दखलअंदाज़ी के चलते संस्थाएं विखण्डित ही नहीं हुई हैं बल्कि इनमें नीरसता आ जाती है और अगर रस रह जाता है तो वह द्वेष, ईर्ष्या व स्वार्थपरता का ही है। अत: इस दखलअंदाज़ी को सिरे से ही खारिज करना उत्तम होगा।

इसके अलावा सशक्त संकल्प, दिग्दर्शिता, स्वपनिल उन्माद लिए दृढ़ इच्छा शक्ति के साथ इन संस्थाओं का संचालन करें तो समाज निरन्तर प्रगति की और बढ़ेगा और इसके साथ सामान्य जन का इसके प्रति उदासीनता सशक्त भागीदारी में तबदील होकर लाहुल छद्मवादविहीन सशक्त विकसित स्वङला के रूप में उभरेगा। इसके लिए प्रबन्धन संस्थानों से पढ़ कर निकले लाहुली नवयुवकों को इसे एक चुनौती के रूप में लेकर आगे आना पड़ेगा। वहीं अगर हमारे नवयुवक आगे नहीं आते तो पेशेवर प्रबन्धकों को इनका प्रबन्धन सौंपा जा सकता है। आज के वैश्विक व्यापार को देखते हुए आधुनिक प्रबन्धन प्रैक्टिसीज़ को अपनाना नितान्त आवश्यक हो जाता है वहीं इस समाज से जुड़े कृषक, व्यापारी, नौकरीपेशा व बुद्धिजीवी वर्ग को सामूहिक संस्थाओं में प्रगतिशील भागीदारी सुनिश्चित करनी ही पड़ेगी।

** छद्म संयुक्त परिवार - ऐसा परिवार जो लाहुली संयुक्त परिवार का मुखौटा तो लिए है लेकिन वास्तव में गुण व दोषों से पूर्णतया आधुनिक एकाकी परिवार ही है।*

सज़ी राम पट्ठे की चढ़ती जवानी और मस्ताना अंदाज़

के० अंगरूप लाहुली

जीवन में अनेक परिवर्तन आते हैं। आज का शिशु कल का युवा और परसों का वृद्ध हो जाता है। शिशु का जीवन अपने माता-पिता के लाड़-प्यार और दुलार की लोलुपता में ही निकल जाता है तो वृद्धजन अगर-मगर और किन्तु-परन्तु में खोया रहता है। वह प्रकृति के नियम से विवश होता है। उसकी कार्यक्षमता धीरे-धीरे क्षीण होती जाती है। उनको ज़िन्दगी दूर जाती और मृत्यु समीप आती दिखाई देती है। युवा अवस्था जीवन का स्वर्ण काल होता है। वह उमंगों में धमा चौकड़ी करता है। पौरुष्य दिखाता है। वह स्वयं को महत्वपूर्ण और प्रफुल्ल समझता है। उसके अरमान आकाश को छूते हैं। वह अपने को जहां तक हो सके सजा-धजा कर रखने का भरसक प्रयास करता है। समाज में सर्वाधिक आकर्षक बन कर रहना उसकी दिनचर्या होती है। जिसके लिए वह विभिन्न प्रकार के अलंकार और नाना परिधान धारण करता है। वह अपनी परिस्थिति और समस्याओं का भी विचार नहीं करता। चूंकि वह दिखावा करने का आदी और वैभव प्रदर्शित करने का अभ्यस्त हो चुका होता है। परन्तु उसे इस जीवन की डगर पर सदा नये-नये मोड़ों और पड़ावों से गुज़रना पड़ता है। उसके कन्धे पर कई पारिवारिक उत्तरदायित्व भी होते हैं। अत: युवा वर्ग अपनी अनगिनत समस्याओं से जूझता रहता है। ऐसी विषम परिस्थिति में कभी-कभी वह झूठ और फ़रेब को भी अनायास अपना लेने में हिचक नहीं करता, बल्कि वह उसे अपना शौर्य या चतुराई समझता है।

लाहुल की प्राचीन युवा पीढ़ी में भी उक्त प्रवृत्ति पाई जाती थी। निम्न गुरे-गीत से तत्कालीन युवा समाज के मौज-मस्ती भरे जीवन की झलक का दिग्दर्शन हो जाता है। सज़ी राम पट्ठा 16वीं शताब्दी का एक मनमौजी युवक था। उसकी आकृति मनमोहक थी और उसका शरीर हृष्ट-पुष्ट गठा हुआ था। वह सदा ठाट-बाट के साथ विचरता और अपनी बांसुरी की तान में खोया रहता था। वह राह चलते बांसुरी बजाता जाता था। उसकी मुरली की स्वर लहरी सुनने के लिए भीड़ उसके पीछे उमड़ पड़ती थी, और लोग झूमने लगते थे। मानो कि कृष्ण कन्हैया के पीछे गोपियों का झुण्ड दौड़ रहा हो।

इस संदर्भ का गुरे-गीत निम्न प्रकार से है :-

1. ए धना ओ सज़ि ए रामा धना तेरे डौले।
   धन्य है, सज़ी राम धन्य है, तेरा डील-डौल सुगठित शरीर।
2. ए सज़ि रामे री डौले ओ सुपूना सैंसारे।
   सज़ि राम के रूप यौवन आदि से सम्पन्न व्यक्तित्व मानो कि स्वप्न का संसार ही है।
3. ए पैरा सज़ि ए रामा कशूमीरे पोलूणू।
   सज़ी राम पट्ठे ने पैरों पर कश्मीरी पनही पहन रखी है।
4. ए जांघा सज़िए रामा थेरूमेरी सुथूणू।
   सज़ी राम पट्ठे ने जांघों को भूषित करने लिए सर्ज के कपड़े का सुथना (पाजामा) बनवाया है।
5. ए धना ओ सज़ि ए रामा धना तेरे डौले।
   धन्य हैं सज़ी राम धन्य है, तेरा डील-डौल, सुगठित शरीर।
6. ए पीठी सज़ि ए रामा फुराकून्दे चोडू।
   सज़ी राम पट्ठे ने तन की शोभा बढ़ाने के लिए लच्छेदार पट्टू का परिधान धारण किया है।

7. ए डाका सज़ि ए रामा दोशाला पटूका।

सज़ी राम पट्ठे ने कटि प्रदेश में पटूका के ऊपर दुशाला बांध रखा है।

8. ए धना ओ सज़ि ए रामा धना तेरे डौले।

धन्य है सज़ि राम धन्य है, तेरा डील-डौल, सुगठित शरीर।

9. ए हाथा सज़ि ए रामा रूपे री कङूणू।

सज़ी राम पट्ठे ने कलाइयों के लिए चांदी का कंगन निर्मित करवाया है।

10. ए काना सज़ि ए रामा सोने री कुण्डूणू।

सज़ी राम पट्ठे ने कानों पर सोने की मुरकी धारण कर रखी है।

11. ए धना ओ सज़ि ए रामा धना तेरे डौले।

धन्य है सज़ि राम धन्य है, तेरा डील-डौल, सुगठित शरीर।

12. ए शीरा सज़ि ए रामा लखी रांगा टोपी।

सज़ी राम पट्ठे ने अपने मस्तक के शोभा के लिए लखी रंग की टोपी बनवाई है, और --

13. ए टोपूडू ऊपूरू बिणी गाड़ा फूला।

टोपी पर चुनिन्दा गहरे वर्ण के पुष्प संलग्न किए हुए हैं।

14. ए धना ओ सज़ि ए रामा धना तेरे डौले।

धन्य है सज़ि राम धन्य है, तेरा डील-डौल, सुगठित शरीर।

15. ए डाका पीडून्दा ए रीये री मुरोली।

कटि पर कमर बन्द के साथ पीतल की मुरली ठूस रखी है।

16. ए बात्तेया हाण्डून्दा ए मुरोली री ठुणूके।

पथ पर यानी राह पर चलते हुए मुरली की सुरीली तान से वन्य प्रदेश को सपन्दित कर देता है।

इस प्रकार बांसुरी का मधुर सुर को सुन कर मार्ग के अगल-बगल चलने वाले सराबोर हो कर --

17. ए लोके बोलून्दा ए कुणू माणू हण्डेला।

लोग आपस में पूछने लगते हैं कि यह कौन इन्सान मुरली बजा रहा है? और कहने लगते हैं कि अरे! हां-हां यह तो वह मनचला --

18. ए बात्तेया हण्डून्दा ए सज़ि रामा हण्डेला।

राहगीर सज़ी राम पट्ठे की स्वर लहरी है।

19. ए धना ओ सज़ि ए रामा धना तेरे डौले।

20. ए सज़ि रामेरी डौले ओ सुपूना सैंसारे।

धन्य है सज़ि राम धन्य है, तेरा डील-डौल, सुगठित शरीर। सज़ी राम के रूप-यौवन आदि से सम्पन्न व्यक्तित्व मानो कि स्वप्न का संसार ही है।

नोट:- चरित्र किसी व्यक्ति का प्रतिबिम्ब होता है। वास्तव में इसे उसके गुण या अवगुणों का मूल्यांकन कहा जा सकता है। सज़ी राम पट्ठा संकटमय क्षणों में भी बांसुरी की तान में समरस हो कर मज़ा लेता रहता था। वास्तव में वह हर प्रकार से महान था।

अपना अर्थ खोता जा रहा- 'सामा'

'सामा' एक ऐसा आयोजन है जो किसी की मृत्यु के बाद उसके परिजनों द्वारा एक वर्ष पूरा होने के पश्चात् सम्पन्न किया जाता है। यदा-कदा इस अवधि में दो तीन माह का अन्तर हो सकता है। इसमें गांव के लोगों तथा अन्य सभी रिश्तेदारों को एकत्र कर मृतक की आत्मिक शांति के लिए तली हुई चपातियों का दान किया जाता है और भोजन तथा पेय दिया जाता है। अलग-अलग समुदायों में सामा की रस्मों में थोड़ा बहुत अन्तर हो सकता है लेकिन मूल भावना वही है। दान और भोजन से ऊपर जो सबसे अधिक महत्व की बात है वह यह है कि इस दिन से रस्मी तौर पर मृतक के प्रति परिजनों का जो शोक है, वह खत्म कर दिया जाता है। लाहुल में एक वर्ष तक शोक रखा जाता है। खास बात है कि सामा के दिन शाम को गांव के लोग तथा निकट सम्बन्धी जो वहां रह जाते है, लुगड़ी-शराब का सेवन भी करते है और खा-पी कर ढोल-बांसुरी बजा कर नाच-गान भी करते है मानो उस शोकग्रस्त घर में फिर से खुशियों का आह्वान करते हों। अगले दिन 'शागुण' नाम का मांगलिक रस्म अदा की जाती है तथा शोकग्रस्त परिवार के सदस्यों को 'शिफुग' नाम के वन फूल दिए जाते है, जो अब तक रखे गए शोक की समाप्ति का द्योतक है। इधर देखने में आ रहा है कि अनेक लोग मृत्यु के दो सप्ताह के भीतर ही सामा सम्पन्न किए जा रहे है। ऐसा उन मामलों में अधिक हो रहा है जिन घरों के कुछ लोग कुल्लू या कहीं और बाहर रहते है तथा वहां पर कोई मौत हो जाती है। तर्क यह दिया जाता है कि कुल्लू में सामा तुरन्त हो रहा है तो लाहुल में भी एक साथ ही निपटा लिया जाए। इस संदर्भ में कुल्लू के रिवाज़ अलग हैं। कुल्लू में 'चोखा' नाम से या 'तेरहवीं' नाम से जो भोजनादि करवाया जाता है वह गृह की शुद्धि के लिए होता है, इस शुद्धि के बिना मृतक के घर में चाहे गांव के लोग हों या रिश्तेदार, कोई भी अन्न-जल ग्रहण नहीं करता। इस लिए जल्द से जल्द 'चोखा' करना अर्थात् 'गृह को शुद्ध करना' अनिवार्य हो जाता है। लाहुल में इस तरह की परम्परा नहीं है। वहां तो दाह संस्कार के बाद झाड़ू-बुहार-गौमूत्र प्रक्षालन तथा 'भट' द्वारा संक्षिप्त सा हवन या लामा द्वारा पवित्र पाठ के बाद शुद्धि हुई मानी जाती है। कहने का अर्थ यह है कि लाहुल का सामा और कुल्लू का चोखा या तेरहवीं, दोनों एक चीज़ नहीं है, इनके सर्वथा भिन्न अर्थ है। लोग इन में घाल-मेल क्यों कर रहे है? चोखा घर की शुद्धि की रस्म है, जबकि सामा मृतक के प्रति रखे शोक के खोलने की रस्म है। तो क्या दो हफ्ते में सामा करके कोई शोक त्याग कर त्यौहार आदि मनाना आरंभ कर सकता है? यह हो नहीं सकता। लाहुल में एक कहावत है, 'रे मेतिङ जन्डेक्टि्र' अर्थात् आठ दिन में सब कुछ निवृत्त कर लेना। यह मुहावरा दुष्ट लोगों की मृत्यु की कामना करते हुए कहा जाता है। अब तो प्रिय से प्रिय जनों को भी आठ दिनों में निपटाने की नौबत आन पड़ी है। यदि सामा के निहितार्थ को सही अर्थ में देखें तो तत्काल किया जाने वाला इस प्रकार का सामा मृतक के प्रति तिरस्कार अर्थक ही ठहरता है। सामा के बारे में लोगों को चाहिए कि वे उसे उस के सही संदर्भ में रख कर गहराई से सोचें। मेरा मानना है कि सामा को अपने मूल अर्थ, शोक खोलने के रस्म के रूप में ही रहने देना चाहिए और इसके लिए कम से कम छह-आठ महीने का अन्तराल तो देना ही चाहिए और फिर उसके बाद सामा के साथ सचमुच में ही शोक समाप्त कर देना चाहिए।

सतीश कुमार लोप्पा

शत्रु विनाश - 2
(मिलारेपा की जीवनी)

- ठिन्ले नमज्ञल एवं अजेय

गतांक में आप ने पढ़ा-

बहुत परिश्रम करते हुए ठोईयागा (मिलारेपा) की माँ अपने पुत्र को 'थू सीखने के लिए भेजती है। अपनी चल-अचल सम्पति तक उन्हें बेचनी पड़ी ताकि शत्रुओं (चाचा, बुआ तथा उनके पक्ष के ग्राम वालों) से बदला लिया जा सके। ठोईपागा विभिन्न गुरुओं का विश्वास जीतते हुए अंतत: उस गुरु के संपर्क में आता है जो उसे 'थू' सिखा सके। गुरु को काया-वाक्-चित्त समर्पित करने का वादा कर ठोईपागा 'थू' की साधना करता है। मंडल में उसे अपने चाचा-बुआ के अतिरिक्त सभी शत्रुओं के 35 नरमुंडों के दर्शन होते हैं। उधर वास्तव में इस 'थू' का प्रभाव गांव में इस प्रकार दिखाई देता है:- अब आगे-)

क्यङ्च में चाचा के बड़े पुत्र का विवाहोत्सव चल रहा था। हमारे पैंतीस दुश्मन वर-वधू को आशीर्वाद देने के लिए एकत्रित हुए थे। चाचा का घर दुल्हन की तरह सज रहा था। बारातियों में कुछ हमारे पक्ष के लोग भी थे जो आपस में वार्तालाप कर रहे थे -

"इन लोगों ने घर के स्वामियों को कुत्ते की तरह बाहर खदेड़ दिया और स्वयं घर पर कब्जा कर बैठ गए। ऐसे निर्दयी लोगों पर ठोईपागा का थू असर करे या न करे। लेकिन ईश्वर के सत्य रुपी 'थू' से ये कभी न बच पाऐंगे।"

बुआ और चाचा ने यह सुन कर कहा - "इस व्यक्ति को जल्दी से कुछ खिला दो, ताकि इसके अपशब्दों का निवारण हो सके।" उसी समय घर की नौकरानी पानी लेने के लिए बाहर निकली तो उसने एक आश्चर्यजनक दृश्य देखा। अस्तबल में घोड़ों के स्थान पर बहुत से बिच्छू, भालू, सांप, मेंढक आदि विचर रहे थे। उनसें से एक याक के आकार का बिच्छू अपने दोनों सींगों से मुख्य स्तम्भ को खींच रहा था। भयभीत होकर नौकरानी भाग निकली। भीतर एक कामोन्मत्त बीजाश्व[1] घोड़ी पर चढ़ने की कोशिश कर रहा था तो सभी घोड़े बिदक गए। और एक दूसरे को दुलत्तियां मारने लगे। एक घोड़े की दुलत्ती मुख्य स्तम्भ पर लगी और चाचा की हवेली ढह गई। सभी बाराती, चाचा के सभी पुत्र और दुल्हा-दुल्हन दब कर मर गए।

थोड़ी देर पहले जहां सजी संवरी हवेली खड़ी थी वहां अब केवल धूल मिट्टी और लाशों का ढेर नज़र आ रहा था। बचे हुए लोग जो उन मृतकों के रिश्तेदार थे उछलते हुए क्रन्दन कर रहे थे।

पेता[2] ने यह सारा दृश्य अपनी आंखों से देखा था। वह दौड़ते हुए अपनी मां के पास गई और सारी घटना सुना दी। घटना स्थल का दृश्य देखकर मां आनंदित हुई और आश्चर्यचकित भी। एक लम्बी लाठी पर चीथड़े लपेट कर फहराते हुए गुरु तथा त्रिरत्न[3] की जय-जयकार करते हुए आनंदातिरेक में मां ने विजय घोष की -

"देखो ग्राम वासियो पड़ोसियो। यह है मिला शरब ज्ञलसन का पुत्र। स्वयं अभावों में जीकर पुत्र के लिए अन्न एकत्रित करना आज सार्थक हुआ। चाचा और बुआ ने हमें चुनौती दी थी - कि तुम अगर अधिक संख्या में हो तो हमसे युद्ध करो। और अगर कम हो तो थू से हमारा नुकसान करो। क्योंकि हम कम थे, अत: हमारे थू का असर देखो। इसके समक्ष युद्ध कुछ नहीं। मैं ञङ्छ कर अभी तक मरी नहीं। अपने पुत्र के इसी कारनामे के कारण मुझे लम्बी आयु मिली, मेरे लिए खुशी का इससे बड़ा अवसर कभी नहीं आया। देखो।।"

वहां खड़े लोगों में कुछ लोग ऐसे भी थे जो दिल ही दिल में हमारे साथ थे। वे चाहते थे कि न्याय हो।

लेकिन दबाव में आकर बटवारे के समय हमारा साथ न दे सके थे। मां के ये उद्‌गार सुनकर उनमें से एक बोल पड़ा - "अब की बार इस औरत ने बहुत अच्छा किया" कुछ अन्य भी कह उठे "सच्चाई आखिर सच्चाई है।"

लेकिन जो मृतकों व प्रभावितों के पक्षधर थे मां की बातों से जल भुन कर रह गए। क्रोधित होकर कहने लगे-

"यह कितनी बदमिज़ाज़ औरत है। इसने विनाश से मिलने वाली रस को छिपाने की बजाए सरे आम प्रकट कर दिया। हम इसका बदला लेंगे। इसे नौ प्रकार के कष्ट देने[4] के बाद इसका हृदय खींच लेंगे तथा इसकी बलि चढ़ा देंगे।

कुछ बुजुर्गो ने समझाया - "इस बुढ़िया को मारने से क्या लाभ होगा? इसका पुत्र ज़िन्दा बचा तो पुन: विनाश करेगा। कोशिश यह करनी चाहिए कि उसे खोज कर, उसके दोनों हाथ बांध कर उसका वध किया जाए। फिर इस औरत से निपटना आसान हो जाएगा।

चाचा क्रोध में अंधा हो रहा था। "मेरा अब आगे पीछे कोई नहीं बचा है। मेरा कोई क्या बिगाड़ सकता है?" ऐसा कहते हुए वह मां को मारने दौड़ा। गांव वालों ने उसे रोकते हुए समझाया - "पहले भी तुम्हारी ही विवेकहीनता ने गांव को विनाश के कगार पर पहुंचाया। ठोईपागा को ज़िन्दा रख कर तुम फिर से वही गलती दुहरा रहे हो। अब की बार भी यदि तुम मनमानी करोगे तो हमारा आपस में झगड़ा हो जाएगा।"

अपने पक्ष वालों की इस चेतावनी ने चाचा को किंकर्त्तव्यविमूढ़ कर दिया। इसके पश्चात वहां उपस्थित लोगों ने मुझे मार डालने की योजना बनाई। मामा वहां बैठे सब सुन रहे थे। उन्होंने मां को चेताया कि "थू के प्रभाव से जो विनाश लीला हुई है उसके कारण पूरे गांव में तुम्हारी और तुम्हारे पुत्र की निन्दा हो रही है। ग्रामवासी भड़क गए हैं तथा तुम दोनों का वध करने की योजना बना रहे हैं।"

इस पर मां बिलखते हुए मामा से कहने लगी - "मैं सब जानती हूं। यह सब तुम्हारे ऊपर नहीं बीती है तभी ऐसा सोच रहे हो। उन्होंने मेरा सर्वस्व छीन लिया है। यह मै कैसे सहन कर लूं? उसके मुंह से बोल नहीं फूट रहे थे।"

मामा ने कहा "ठीक है, मैं भी जानता हूं, तुम सही हो। लेकिन वे कभी भी तुम्हें मारने आ सकते हैं। तुम दरवाज़ा ठीक से बन्द रखना।"

अर्गला चढ़ाते हुए मां के मन में तरह-तरह के विचार एवं संदेह जन्म ले रहे थे। उधर चाचा की नौकरानी (जो पहले हमारी नौकरानी हुआ करती थी) ने जब इस षड़यन्त्र के बारे में सुना तो उससे रहा न गया। और दौड़ी-दौड़ी मां के पास पहुंच गई। कहने लगी कि अपना और अपने पुत्र के प्राण बचाने की कोशिश करो। मां ने कहा कि मेरी इच्छा तो पूरी हुई, अब वे लोग जो जी में आये योजना बनाते रहें। उन्होंने डे पेतन घुङ[5] का बचा हुआ भाग सात सेर साङ्[6] के बदले बेच दिया।

मां सोच रही थी कि गांव वाले ज़रूर कोई आदमी भेज कर उसकी हरकतों का स्पष्टीकरण मांगेंगे। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। अब मां को ऐसे आदमी की तलाश थी जो मेरे पास अन्न तथा मशवरा पहुंचा सके। कोई भी नही मिला तो मां स्वयं इस कार्य को करने के बारे में सोचने लगी।

तभी एक दिन एक योगी भिक्षाटन करता हुआ घर आया। वह विश्व भ्रमण पर निकला था। मां ने उसकी खूब सेवा की। वह उसके यात्रा संस्करण बड़े चाव से सुनती। उसे लगा कि यह योगी एक उपयुक्त संदेशवाहक हो सकता है। अत: अनुरोध किया :- "आप कुछ दिन यहीं रुकिए। मध्य चङ् की दिशा में मेरा पुत्र रहता है। उस तक मेरा संदेश पहुंचाने में मेरी सहायता करें।"

मां ने एक दीप जलाकर संकल्प किया - "यदि मेरा कार्य सिद्ध होने वाला हो तो यह दीप लम्बे समय तक प्रज्वलित होता रहे। अन्यथा शीघ्र ही बुझ जाए। ठोईपागा के गुरु तथा धर्मपाल इस कार्य को सिद्ध करें।"

दीप एक रात और एक दिन तक जलता रहा। मां आश्वस्त हो गई। यायावर योगी को कपड़े व पूला भेंट किए गए। मेरे लिए मां ने एक बेङ्फो[7] सिला। उसकी एक काली थिगली में सात सेरसाङ् छिपा कर ऊपर से कृत्रिका नक्षत्र के आकार में सफेद धागे की सिलाई लगाई। योगी को खूब उपहार देकर तथा कूट शब्दों में एक पत्र थमा कर रवाना कर दिया गया।

मां अपनी चतुराई पर प्रसन्न थी। उसने सोचा कि गांव वाले हमारे विरूद्ध जो चाहें षडयन्त्र रचते रहें, लेकिन हम भी उन्हें मज़ा चखा कर छोड़ेंगे। उसने पेता से कहा कि गांव भर में यह अफवाह फैला दो कि कल जो घुमन्तू योगी आया था उसके हाथ भाई का पत्र आया है। मां ने स्वयं ही मेरी ओर से एक नकली पत्र लिखा, जो इस प्रकार था - "प्रिय मां तथा बहन पेता, क्या आप दोनों कुशल मंगल हो? आप लोगों ने गांव में मेरे जादू के लक्षण तो देख ही लिए होंगे। क्या अब भी गांव वाले आप से घृणा करते हैं? यदि ऐसा है तो उस व्यक्ति का नाम गोत्र आदि लिख भेजना। मैं अपने जादू से उसके प्राण इतनी आसानी से निकाल दूंगा जैसे हम देवगणों को भेंट चढ़ाते हैं। इतना ही नहीं मैं उसकी नौ पीढ़ियों का समूल नाश कर दूंगा। अगर सभी ग्राम वासी घृणा करते हों तों आप लोग इधर मेरे पास आ जाओ। मैं उस गांव का नामो निशान मिटा दूंगा। मैं यहां अच्छी आजीविका कमाते हुए असीम धन दौलत के बीच जीवन यापन कर रहा हूं। अत: आप मेरी चिन्ता न करें।"

पत्र मुहर बन्द कर मामा के घर रखवा दिया गया। ताकि सब लोग उसे देखें। इस पत्र का इतना प्रभाव रहा कि दुश्मनों के विचार ही बदल गए। हमें मारने की योजना रद्द कर दी गई। खानदानी खेत छोरमा डुसुम को चाचा से छुड़वा कर मां बेटी के हवाले कर दिया गया।

इधर घूमन्तू योगी मेरे पास पहुंच गया। मां और बहन से सम्बन्धित सभी समाचार सुनाने के बाद मुझे पत्र पकड़ाया। लिखा था - "प्रिय ठोईपागा, क्या तुम कुशलमंगल हो? आज तुम्हारा जन्म सार्थक हुआ। तुमने पिता शरब ज्ञलसन की वंश प्रतिष्ठा पर आंच न आने दिया। गांव भर में तुम्हारे थू का लक्षण दिखा। हवेली ढहने से 35 दुश्मन मर गए। फलस्वरूप हम मां-बेटियों को ग्रामवासियों का प्रतिकार झेलना पड़ा। तुम अपना प्रतिशोध जारी रखो। नौ ग्यड्रिम्[8] ओले बरसाओ। तभी इस बूढ़ी मां का कलेजा ठण्डा होगा। ग्राम वासियों ने तुम्हारी खोज में आदमी भेजे हैं। वे तुम्हें और उसके बाद मुझे मार डालना चाहते हैं। अपनी और मेरी प्राण रक्षा के लिए पुन: साधना शुरू करो। भोजन समाप्त हो जाए तो उस प्रान्त (गांव) में जाकर पता करना जहां सूर्योदय नहीं होता तथा काले बादल छाए रहते हैं। उसके नीचे अपने ही संबंधियों के सात घर हैं उनसे जितना चाहो ले लो। नहीं बूझ पाओ तो उसी गांव में वही योगी रहता है अत: दूसरों से पूछने की आवश्यकता नहीं है।"

मैं यह कूट भाषा समझ नहीं पाया। मां की और घर की बहुत याद आई। पल भर के लिए अपनी समस्याओं को भूल कर उनकी याद में रोने लगा। मेरे पास अन्न समाप्त था। जिस जगह की बात पत्र में लिखी गई थी मुझे उसका पता नहीं था। मैंने योगी से पूछा - "क्या तुम्हें पता है वह योगी और प्रान्त (गांव) कहां हैं?" योगी ने कहा "यह ङरि गुङ्थङ् में है। इसके अतिरिक्त कुछ नहीं जानता। मुझे कई प्रान्तों के बारे में पता है। लेकिन तुम्हारे संबंधियों के प्रान्त के बारे नहीं जानता। मैं स्वयं मध्य प्रान्त का रहने वाला हूं।"

योगी को वहीं रुकने के लिए कह कर मैं गुरु के पास गया। पत्र दिखा कर गांव के समाचार सुनाए। गुरु ने पत्र पढ़ कर कहा -"तुम्हारी मां बहुत ही ईर्ष्यालु लगती है। इतने आदमी मरने पर भी उसे तसल्ली नहीं हुई। लिखती है, अब ओले बरसाओ। तुम्हारे इधर कितने संबंधी रहते हैं, ठोईपागा?" "पहले कभी इस बारे नहीं सुना। केवल पत्र में ऐसा लिखा है। योगी से पूछा लेकिन कुछ नहीं बता पाया।" मैंने कहा।

भीतर गुरु पत्नी हीशे खंडो हमारा वार्तालाप सुन रही थी और पत्र को बूझने बैठ गई। उसने योगी को बुलवा भेजा। तापने के लिए आग जलाई और बहुत ही बढ़िया छङ प्रस्तुत किया। योगी से बेङफो लेकर उन्होंने स्वयं ओढ़ लिया।

"विश्व भ्रमण को निकले योगी को ऐसा सुन्दर बेङ् ओढ़ कर कितना आनन्द आता होगा।" ऐसा कहते हुए वह शरीर के दोनों ओर उस वस्त्र को फहराते हुए छत पर चढ़ गई। वहां उसने नज़र बचा कर सिली हुई स्वर्ण मुद्राएं निकाल दीं। थिगली यथावत् सिल दी। योगी को रात का भोजन खिला कर रवाना कर दिया। फिर मुझे बुला कर मुद्राएं सौंप दी।

"सोना कहां से प्राप्त हुआ?" मैंने प्रसन्न होकर पूछा।

"बेङ्फो के भीतर" गुरुपत्नी ने कहा "ठोईपागा की मां अत्यन्त बुद्धिमती प्रतीत होती है।" ऐसा कह कर वह कूटभाषा को विश्लेषित करने लगी।

"ऐसा प्रान्त जहां सूर्योदय नहीं होता है का अर्थ है योगी का बेङ्फो। काले बादल का अर्थ है उस पर लगी काली थिगली। "कृत्रिका नक्षत्र" का अर्थ है सफेद धागे से लगी उसी आकार की सिलाई। "संबंधियों के सात घर" से तात्पर्य है सात स्वर्ण मुद्राएं।

गुरु ने कहा "तुम औरतें सचमुच बड़ी कुशाग्र बुद्धि होती हैं।" यह सुन कर गुरुपत्नी प्रसन्न हो गई।

अब मेरे पास धन था। मैंने एक सेरजो[9] योगी को दिया।

गुरु माता को सात सेरजो भेंट किए। गुरु को तीन सेरसाङ् भेंट करते हुए विनती की - "मेरी बूढ़ी मां को अभी और ओले चाहिए। कृपया औले बरसाने की तांत्रिक विद्या मेरे चित में समाविष्ट कर दो। गुरु ने कहा "अगर तुम्हें ओले चाहिए तो युङ्तोव ठोग्याल के पास जाओ।"

गुरु का पत्र एवं कुछ उपहार लेकर मैं पुनः युरलुङ क्योरपो डोङ् की ओर निकला। मिलते ही मैंने उन्हें पत्र और भेंट प्रस्तुत किए। गुरु से आग्रह किया कि मुझे ओले चाहिए।

गुरु ने पूछा "क्या तुमने थू सीख लिया?"

"हां, मैं पारंगत हो गया हूं तथा मैंने 35 व्यक्ति मार गिराए हैं।".....

मां ने मुझे लिखा है कि अभी और ओले बरसाओ। कृपया ओलावृष्टि की विद्या मेरे चित में प्रविष्ट कर दीजिए।" मैंने प्रार्थना की। गुरु ने मुझे साधना के अनुष्ठान सिखाए। एक प्राचीन कक्ष में बैठकर मैंने सिद्धि की।

सात दिनों के भीतर साधना कक्ष घने बादलों से भर गया। बिजली चमकने लगी। ड्रेगन तथा राहु नक्षत्र की गरज[10] सुनाई देने लगी। गुरु कृपा से मुझे विश्वास आने लगा कि अब मैं उंगलियों के इशारे पर ओलावृष्टि करवा सकता हूं। उन्होंने पूछा - "तुम्हारे गांव में फसल कितनी ऊंची हो गई होगी?"

"कोंपलें इतनी उठ गई होंगी कि कबूतर उनमें छिप जाएं" मैंने उत्तर दिया।

"अभी थोड़ी जल्दी है।"

कुछ दिन बाद फिर वही प्रश्न पूछने पर मैंने बताया "अब तो बंजरिया आ गई होगी।"

"समय आ गया है। जाओ और विजयी हो।"

गुरु ने मेरे साथ एक और शिष्य सहायता के लिए भेजा। भेष बदल कर हम गांव पहुंचे। फसलें लहलहा रही थीं। बुजुर्गों की स्मृति में कभी इतनी अच्छी फसल नहीं हुई। गांव का नियम था कि कटाई एक साथ शुरु की जाए।

नियत तिथि से दो दिन पूर्व मैंने गांव के ऊपर जाकर साधना आरम्भ की। खूब मन्त्रोच्चारण करने पर भी आसमान पर बादल का टुकड़ा तक नज़र न आया। तांत्रिक देवगणों को पुकार-पुकार कर न्याय की दुहाई दी। ग्रामवासियों द्वारा किए गए अत्याचारों की व्यथा सुनाई। फिर बेङ्फो फहराते हुए मैं रो पड़ा। अचानक आसमान में बड़े-बड़े काले बादल मंडराने लगे। पल भर में ही ओले बरस पड़े। पहाड़ों में नदियां बहने लगी। खेतों में फसल का एक भी दाना न बचा। यह देखकर गांव वाले उछल-उछल कर क्रन्दन करने लगे। फिर पानी बरसा और भयानक आंधियां चली। हम लोग झाऊ[11] के एक पौधे पर आग जला कर गुफा में दुबके पड़े थे।

तभी उधर से गांव के कुछ पुरुष बातचीत करते हुए गुज़रे। वे लोग ग्राम देवता के सालाना भोज के लिए मृगादि[12] के शिकार में निकले थे। "ठोईपागा ने इस गांव को जितना दुःख दिया उतना किसी ने नहीं दिया। पहले इतने सारे लोगों का वध किया। अब इस लहलहाती फसल को तबाह कर दिया। इस बार वह कहीं हाथ लगे तो जिन्दा ही बलि चढ़ा देंगे। उसकी देह का एक टुकड़ा और लहू की एक बूंद ग्रहण किए बिना चैन से नहीं रहेंगे।"

"चुप-चुप, आवाज धीमी रखो।" उनमें से एक सियाना आदमी बोला "ऊपर गुफा में धुंआ सा उट रहा है। शायद कोई है।" युवकों ने कहा "यह ज़रूर ठोईपागा है। अभी उसने हमें देखा नहीं होगा। हमें छिप कर वार करना होगा। वर्ना वह गांव में और भी विनाश करेगा।" वे लोग लौट गए।

हमें मालूम हो गया कि हम पकड़े गए हैं। खतरा भांपते हुए मेरे साथी ने कहा "तुम पहले निकलो। मैं तुम्हारा भेस बदल कर बाद में आता हूं।" हम दोनों ने ठीक चार दिन बाद दिङ्रि सराय में मिलने का वादा किया।

वहां से निकल भागते हुए मुझे एक बारगी लगा कि क्यों न गांव में अपनी बूढ़ी मां से मिलता चलूं। लेकिन शत्रुभय के कारण जल्द से जल्द ञनङ्कोर की ओर भाग लेना उचित समझा। भागते हुए एक कुत्ता मेरे पीछे पड़ गया जिसके काटने से मैं नियत स्थान पर एक दिन देरी से पहुंचा।

उधर मेरा साथी दुश्मनों से घिर गया। वह सेना को बीच से चीर कर निकल भागा। जब शत्रु निकट पहुंचते तो वह तेजी से भागता। जब वे काफी पीछे छूट जाते तो वह अपनी गति कम कर देता। शत्रु के अस्त्रों[13] के प्रत्युत्तर में वह बड़े-बड़े पत्थरों का प्रयोग करता। साथ में चीखता जाता - "यदि तुम लोगों की वजह से मेरी कुछ हानि हुई तो मैं तुम सब पर थू का प्रयोग करूंगा। तुमने देखा ही है, मैंने सभी शत्रुओं का वध किया है। फसलें नष्ट कर दीं। अभी भी तुम मेरी मां और बहन को बताओगे तो मैं गांव में प्रेतबाधा अभिचारित[14] कर दूंगा। तुम लोगों में आपसी कलह उत्पन्न कर दूंगा। तुम्हारी नौ पीढ़ियों का समूल नाश कर दूंगा। मैं तुम्हारे गांव को मिट्टी के ढेर में बदल दूं तो मेरा नाम ठोईपागा नहीं।" यह सब बकता हुआ वह भागता जा रहा था। शत्रु भयभीत हो गए।

"तुम उत्तर दो! तुम उत्तर दो।" ऐसा विवाद करते हुए आपस में झगड़ते हुए वे गांव लौट गए। इस प्रकार मेरा साथी मुझ से एक दिन पूर्व ही सराय में पहुंच गया।

मैं जब सराय पहुंचा तो प्रबन्धक से हुलिया बयान कर साथी के बावत पूछताछ करने लगा। उसने कहा - "यहां तो कोई ऐसा व्यक्ति नहीं आया। लेकिन तुम जोगी महात्माओं का क्या भरोसा? ऐसा करो, गांव में एक जगह मदिरा भोज चल रहा है। वहां पता करो। तुम्हारे पास पात्र भी नहीं होगा[15] मैं उधार देता हूं। यक्ष की मुखाकृति के आकार का पात्र उधार लेकर मैं भोज स्थल पर पहुंचा। वहां बैठक में लम्बी कतार लगी थी। मैं सबसे पीछे बैठ गया।

साथी ने मुझे पहचान कर कहा "कल क्यों नहीं आए?"

"कल भिक्षा के लिए गया था। एक कुत्ते ने काट लिया, सो देरी हो गई।"

"कोई बात नहीं। अब निश्चिंत हो जाओ।"

भोज के उपरान्त हम मज़े-मज़े से टहलते हुए युरलुङ् क्योरपो पहुंचे। गुरु ने पूछा - "तुम दोनों को अधिक कष्ट तो नहीं हुआ?"

हम हैरान हो गए - "हम दो के सिवा कोई तीसरा आदमी नहीं था। आपको कैसे मालूम?" गुरु ने बताया "समस्त देवगण पूर्णिमा के चन्द्र के समान मुख लिए हुए प्रकट हुए थे। उन्हीं से सब ज्ञात हुआ। उन्हें देव भोज भी प्रस्तुत किया।"

फिर हम सब वहां प्रसन्नतापूर्वक बैठे रहे।

इस प्रकार शत्रुओं का विनाश कर मैंने काले कर्मों का संचय किया।

।। शत्रु विनाश की लीला का तीसरा अध्याय समाप्त ।।

---

1. ***Stallion**, नर घोड़ा जो संतति के लिए रखा होता है।*
2. *मिलारेपा की बहन।*
3. *बुद्ध, धर्म तथा संघ।*
4. *आठ प्रकार के कष्ट : जन्म, जीवन, रोग, मृत्यु, प्रिय का वियोग, अप्रिय का संयोग, इच्छापूर्ति न होना, पंच स्कंध। नौ प्रकार के कष्ठ से तात्पर्य संभवतः इन सब ज्ञात कष्टों से भी बढ़कर कष्ट देने से है।*
5. *खानदानी खेत, जिसका एक भाग ठोईगापा की शिक्षा के लिए पहले ही बिक चुका था।*
6. *स्वर्ण मुद्रा*
7. *कन्था, खींद*
8. *बर्फ नापने की एक इकाई। तिब्बती शैली में मिट्टी के घर बनाने की विधि में प्रयुक्त एक "गोंदा" की चौड़ाई (लगभग 45 इंच अथवा सवा गज) इस प्रकार नौ ग्यङरिम - लगभग ग्यारह गज़।*
9. *सेरजो - तिब्बत में सोना तोलने की एक इकाई। (एक स्वर्ण मुद्रा अनेक सेरजो भार धारण करता है)*
10. *तिब्बत में मान्यता है कि बिजली की चमक और गरज बादलों में रहने वाले भयानक जीव ड्रेगन (ड्रुग) तथा राहू नक्षत्र उत्पन्न करते हैं।*
11. *पेन्मा (तिब्बती) - एक सदाबहार झाड़ी*
12. *रिदाग् (तिब्बती) - पहाड़ी जीव*
13. *त्सोन (तिब्बती) - अस्त्र*
14. *गतद (तह) - (तिब्बती) - मन्त्र कीलित करना/चेटू कीलना*
15. *तिब्बत में छङ्तोन (मदिरा भोज) में शामिल होने के लिए (अतिथि को) अपना पात्र लेकर जाने की प्रथा थी।*

चन्द्रभागा घाटी की संस्कृति में शिवरहग की महत्ता

– विकास

वैसे तो हमारी घाटी में कई तरह के पत्थर पाए जाते हैं। लेकिन उन सभी पत्थरों में सफेद पत्थर यानि शिवरहग को बहुत ही पवित्र माना जाता है। शिवरहग यानि शिव का पत्थर हमारे धार्मिक पूजा–पाठ, त्यौहारों और अनुष्ठानों में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यह कहना कठिन है कि इस पवित्र पत्थर को पूजने की प्रथा या त्यौहारों इत्यादि में प्रयोग करने की प्रथा कब शुरु हुई। शायद भगवान शिव के श्वेत वर्ण के कारण इसे सांकेतिक रुप में शिव पत्थर या फिर पवित्र माना गया। इसके कई उदाहरण हमें हमारे समाज में मिल जाएंगे। हमारे यहां भी पूजापाठ की परम्परा अन्य समाजों की तरह ही विद्यमान है और विभिन्न प्रकार के देवी–देवताओं की पूजा की जाती है, लेकिन सफेद पत्थर या शिवरहग आपको घाटी के हर घर के छत के एक कोने पर मिल जाएंगे जोकि शिवलिंग नुमा आकार के होते हैं और ध्यान देने वाली बात यह है कि इसकी संख्या दो होती है। एक सफेद रंग का तथा दूसरा हल्के लाल रंग का जो संभवतया भगवान शिव और मां पार्वती का सांकेतिक रुप है, नित्य पूजा–पाठ के क्रम में सुबह इनकी पूजा की जाती है तथा जंगली धूप (शुर) का धूप जलाया जाता है। और इस पवित्र पत्थर को हमेशा घर के छत के कोने पर दक्षिण पूर्व दिशा में विराजमान देखा जा सकता है। हर समाज में त्यौहारों का अपना महत्व होता है। हमारे समाज में भी भौगोलिक परिस्थितियों के कारण सभी त्यौहार शरद ऋतु में ही मनाये जाते हैं। इन्हीं त्यौहारों में एक है महाशिवरात्रि का त्यौहार। शिवरात्रि के दिन सन्ध्या होते ही पूजा अर्चना के पश्चात् शिवरहग के छोटे–छोटे टुकड़ों (जो कि पहले ही तोड़ कर रख दिए जाते हैं) को थाली में रखकर आपस में रगड़–रगड़ कर घर का एक सदस्य 'खारशोग' का उच्चारण करते हुए उन पत्थरों को घर के सभी कमरों में एक या दो टुकड़े फैंकता हुआ छत पर निकलता है और घर के छत व घर के चारों तरफ भी इन टुकड़ों को फैंकता है। इसके अलावा यदि अतिरिक्त घर भी हों तो वहां पर भी यही क्रिया दोहराई जाती है। इसका आशय तो यही हो सकता है कि अगर घर में या आस पड़ोस में बुरी शक्तियों का वास हो तो इससे उन बुरी शक्तियों का नाश हो तथा पूरे घर, आस पडोस या फिर पूरे इलाके में अच्छी शक्तियों का वास हो ताकि सब के घर में सुख–शान्ति व समृद्धि आए, सभी अपना जीवन पूरे उत्साह, उल्लास व आनन्द के साथ जिएं तथा सभी का कल्याण हो। इसके अतिरिक्त इस सफेद पत्थर का विभिन्न प्रकार के अनुष्ठानों जैसे भट (पंडित) द्वारा टाड़ा फैंकने (तंत्र–मंत्र) में भी इसका प्रयोग होता है। हमारे यहां भी अन्य समाजों की ही तरह तंत्र–मंत्र पर विश्वास किया जाता है। भट या पंडित जब किसी के घर में टाड़ा फैंकता है तो इस सफेद पत्थर के टुकड़ों को थाली में रखकर आपस में रगड़ते हुए विभिन्न प्रकार के मंत्रों का उच्चारण करते हुए अपने कार्यक्रम को सम्पन्न करता है। इसके अतिरिक्त इन सफेद पत्थरों को घरों के निर्माण में प्रयोग नहीं किया जाता है। कहने का तात्पर्य है कि हमारे समाज में सफेद पत्थर को बहुत ही शुद्ध, पवित्र व पूजनीय माना गया है। श्वेत वर्ण होने के कारण इस पत्थर को भगवान शिव को समर्पित किया गया है। यह पत्थर हमारे समाज की सांस्कृतिक व्यवस्था का एक अभिन्न अंग है और ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास का सूचक भी है।

लाहुल स्पिति देवी-देवताओं की घाटी

शिव चन्द ठाकुर

लाहुल घाटी एक प्याली नुमा दुर्गम घाटी ग्लेश्यरों और आबशारों से भरपूर, कल-कल करती नदी-नालों के आलाप, आसमान से बातें करते हुए गगनचुम्बी हिमालय पर्वत, क्रूर रोहतांग दर्रा जो लाहुल के लिए द्वार का काम करता है। अपनी खासियतों से भरपूर तुंद और सर्द हवाएं शिद्दत की सर्दी और सर्दियों में छः महीने बाकी दुनिया से अलग करने वाला दर्रा, भारी हिमपात के कारण यातायात में रुकावट पैदा करने वाला दर्रा, तमाम खासियत की वजह से यहाँ के लोग सदियों से ज़िन्दा हैं। राज बदला, ज़माना बदला, इनको इससे मतलब नहीं। फिर भी ये लोग ज़िन्दा हैं, जी रहे हैं और वक्त के साथ जीवन बिता रहे हैं। लाहुल को स्वँगला देश, यानि आर्यों का देश नाम से भी याद किया जाता है। सन 1950 या यूं कहिए आज़ादी से पहले यह दुर्गम घाटी गवर्नमैंट ऑफ इण्डिया के 1935 के कानून के लिहाज़ से पिछड़ा हुआ या **Excluded Area** करार दिया हुआ था। जो लोकल ठाकुर और राणा या राजाओं के अधीन रहा। कभी चम्बा राजा के, कभी लद्दाख राजा के, कभी सिक्खों के गुलाम रहे, कभी गुगे राणों के गुलाम रहा। 1950 से पहले यानि आज़ादी से पहले यह दुर्गम घाटी गरीबी, जहालत, बहमपरस्ती के जाल में बुरी तरह जकड़ा हुआ था। सर्दियों में यहाँ के युवा रोटी-रोज़ी कमाने के लिए कुल्लू, कांगड़ा, शिमला का रुख करते थे। जहाँ वह ज़मींदारों के खेतों में काम करते थे या घरों में भी नौकरी किया करते थे। आखिर कब तक इन हालात में दिन गुज़ारते? तबदीली आई। गोरों के राज को बदलने में देरी नहीं आई। कौमपरस्त युवा ने अपने बलबूते से महात्मा गाँधी, पण्डित नेहरू, सरदार पटेल, सुभाष चन्द्र बोस, अब्दुल कलाम आज़ाद, नौजवान भगत सिंह, राजगुरू, सुखदेव जैसों के दिखाए रास्तों को अपनाया और भारत के चप्पे-चप्पे से इन्कलाब गूंज उठा। ऐसे हालात ने ब्रिटिश इम्पेरिलिज़म (**Imperialism**) की जड़ों को खोखला कर दिया। आखिर भारत आज़ाद हुआ। इसके साथ ही हमारी जन्मभूमि लाहुल कैसे गुलाम रह सकती थी। फ्यूडल जागीरदाराना हकूमत का भी अन्त हो गया। लाहुल-स्पिति पीपल्स एसोसिएशन का जन्म हुआ। जिससे लाहुल-स्पिति में क्राँति आई। चौतरफा विकास का धूप उदय हुआ। लाहुल-स्पिति पीपल्स एसोसिएशन के झण्डे तले लोगों में उत्साह, जोशोखरोश की भावना उमड़ पड़ी। जिसके कारण लाहुल-स्पिति के विद्यार्थियों को पढ़ाई के लिए वज़ीफा, शेड्यूल ट्राईब्ज़ का संवैधानिक आरक्षण और एक ताकतवर एडवाइज़री काऊंसिल का वजूद में आना और विधानसभा में रिज़र्व सीट का मिलना, इस तरह एक नए लाहुल-स्पिति के जन्म का आगाज़ हुआ। आज लाहुल-स्पिति तरक्की के रास्ते पर लगातार चल रहा है। खोज़बीन के ज़रिए से मालूम हुआ कि 1936 में कुठ का कश्मीर से बीज लाना, आलू मोराबियन मिशन द्वारा लाना, धुआँ रहित चूल्हा का जन्म, लाहुल की औरतों का जुराब, स्वेटर की बुनाई सीखना। आज लाहुल तरक्की के रास्ते पर स्थिर है। कारवां चला हुआ है। एक ओर सबसे अधिक ज़रूरी मसला रोहतांग पर सुरंग का निकास, जिसके लिए भारत

सरकार ने फण्ड भी दिया और प्रधानमन्त्री ने इसका उद्घाटन भी किया। मगर काम धीमी गति से चल रहा है। इसलिए लोगों की मांग है कि इस सुरंग को जल्द से जल्द अपने मुकाम तक पहुँचा दिया जाए ताकि यह इलाका यातायात के लिए खुला रहे।

सातवीं सदी से पहले लाहुल–स्पिति के बारे में बहुत कम लोगों को मालूम था। बुद्ध धर्म के आगमन से पहले यहाँ बोन मत का बोलबाला था। रिम्वोछे गुरु पद्मसम्भव के यहाँ आने पर लोगों का दृष्टिकोण बुद्ध धर्म की तरफ आकर्षित हुआ और वे अनुयायी बनते गए। यानि सामाजिक–सांस्कृतिक ज़िन्दगी में लोगों का रुझान बढ़ गया और बदलता गया। इस तरह गुरु पद्मसम्भव ने पहले गुरू घण्टाल के गोम्पा की स्थापना की। इस तरह उन्होंने लोगों का रुझान बुद्ध धर्म की तरफ आकर्षित किया। इसलिए उनको दूसरे बुद्ध का दर्जा दिया। नौवीं सदी एक सुनहरा ज़माना था जब भिक्षु रिन्चेन ज़ंगपो 956 ई0–1055 ई0 के इन्कलाबी कदम से गोम्पे, छोरतेन, स्तूपों का जाल बिछा दिया। जैसे कि खुरिक, रंगरिक, चिचम, किब्बर, ललुंग, लोसर और भी बहुत से जगह कायम किए, जिसके कारण ये गोम्पे पढ़ाई, पूजा और सामाजिक क्षेत्र के लिए गढ़ बन गए। चीनी यात्री ह्यूनसांग इन वाक्यात को जानकर और देखकर हैरान हो गए। लेकिन कहते हैं कि वह कुल्लू से आगे लाहुल–स्पिति नहीं पहुँचे, कारण खराब रास्ता, मौसम की खराबी, दुर्गम घाटी के कारण। ज्ञाछो डुबछेन ने, शाशुर गोम्पा 16वीं सदी में केलांग गाँव के नज़दीक स्थापित किया। इसी तरह अवतारी लामा तगसंग रस्पा ने (ज्हेंदह त्सें) लद्धाख से आकर लाहुल में गैमुर गोम्पा की स्थापना की। उन्हीं दिनों नवांग छेरिंग लामा ने बुद्ध धर्म के प्रचार में बहुत काम किया। खासकर चन्द्रभागा घाटी में। लामा नोरबु कारदंग गाँव के निवासी थे, जिन्होंने ल्हासा से बुद्ध धर्म के धार्मिक ग्रन्थों को ला कर कारदंग गाँव के पास कारदंग गोम्पा की स्थापना की और बुद्ध धर्म को फैलाने में ज़िन्दगी भर प्रयत्नशील रहे। वे बोधिसत्व के तौर पर माने जाते हैं। खुनु लामा भी जाने–माने बौद्ध भिक्षु और पहुँचे हुए गुरु थे उनका निर्वाण शाशुर गोम्पा में हुआ। इस तरह हज़ारों बुद्ध मत के अनुयायियों ने इस घाटी में भगवान बुद्ध की शिक्षा का प्रसार–प्रचार किया। इसी तरह महामहिम दलाईलामा जी, जिनका नाम तन्जिन ज्ञाछो है, जो चोहदवीं अवतारी लामा हैं। इन्होंने दो बार स्पिति और चार बार लाहुल की यात्रा की।

उनका पाँचवां दौरा 1994 में एक अहम और खास वाक्या था। उन्होंने कालचक्र का जिस्पा गाँव में, जो केलंग से 25 किलोमीटर लद्दाख की तरफ है अभिषेक दिया। जहाँ करीबन 40,000 लोग जिनमें विदेशी यात्री, लद्दाख, ज़ंस्खर, स्पिति, किन्नौर और दूसरी जगहों से श्रद्धालु आए थे।

अगर आज हम भूतकाल पर विचार करें तो मध्म युग का ज़माना एक सियासी, सामाजिक और धार्मिक उथल–पुथल का ज़माना रहा। जहाँ बेइन्तहा लड़ाई–झगड़े राजनैतिक भूख के कारण भी कई बार बहुत सारे फौजियों और सिपाही के दल रोहतांग पार कर इस देव भूमि पर कब्ज़ा जमाने आए। तिब्बत, चीन, लद्दाख और कुल्लू की फौज यहाँ आने से नहीं चूके।

इसके अलावा यारकन्द, लद्दाख, ताशकन्द, चीन और कुल्लू के सौदागर भी व्यापारी बनकर घोड़े खच्चरों के साथ इस रास्ते से गुज़रे। मनाली, लेह, लद्दाख के लिए 1948 में आज़ाद भारत के फौजी नौजवान पाकिस्तान के लुटेरे हमलावरों को खदेड़ने के लिए इसी रास्ते से गुज़रे थे। इनको सरअंजाम मैंने खुद और मरहूम ठाकुर देवी सिंह की अगुवाई में दिया था और हमारी फौज ने लेह, लद्दाख तक पाकिस्तानी लुटेरों को खदेड़ दिया और लद्दाख बचा लिया था। लेह लद्दाख तक इस रास्ते से जाने वाले व्यापारी भी मशहूर सिल्क रूट से गुज़र कर लद्दाख के बाहर चीन तक गए। इन व्यापारियों में खासतौर पर होशियारपुर के शादीलाल फर्म, लाहुल स्पिति के व्यापारी, काँगड़े के व्यापारी आते जाते रहे। लाहुल स्पिति का इलाका सैंकड़ों साल बाहर के लोगों का दखलअन्दाज़ी से बचता रहा। वजह क्रूर रोहतांग दर्रा, कुंज़म दर्रा जो शिद्दत की सर्दी, भारी हिमपात और साथ ही में छः महीने के लिए बाहर के लोगों से बिल्कुल अलग थलग हो जाता है।

लाहुल स्पिति बेइन्तहा दुर्गम घाटी होने के कारण कम से कम छः महीने बाकि दुनियां से कट जाता है, इन्हीं कारणों से लाहुल स्पिति का भू–खण्ड़ सैंकड़ों साल बाकि तहज़ीब या बाहरी दुनिया से दूर रहा। यानि ऐतिहासिक तौर पर, भौगोलिक, नृवैज्ञानिक व पुरातत्व और मोनास्टिक तौर पर गुमनाम रहा। परन्तु शाबाश है उन यूरोपियन यात्रियों का, जिन्होंने अपनी ज़िन्दगी खतरे में ड़ाल कर भी इस दुर्गम घाटी में सफर किया तथा कई महत्वपूर्ण तथ्यों को सामने लाने में कामयाब रहे हैं जैसे ***Alexander Croma Dekoves*** (1784 और 1842) जो हंगेरियन थे और जो पहले इन्सान थे जिन्होंने खोज करके हालात मालूम किए। मगर दूसरे यूरोपियन यात्रियों ने हिमालय के राज़ खोलने और मालूमात हासिल करने के लिए जनूबी हिमालय के दौरे किए। खुद पैदल यात्रा करने से भी न चूके। जिनके दिमाग में यह पागलपन था कि उनके पूर्वज भी कुदरत के इस रंगीन फिज़ा में कभी आए होंगे। उन्होंने तिब्बती भाषा व पवित्र ग्रन्थों का अध्ययन किया और करीबन 5500 टीका टिप्पणी उन भारतीय ग्रन्थों का अध्ययन किया जिनको तिब्बती भाषा में भी सरलार्थ किया। जो 338 ग्रन्थ हैं। वह पहले ऐंग्लो तिब्बतियन शख्स थे जिन्होंने ऐंग्लो तिब्बतन ग्रामर और डिक्शनरी लिखी। 1853 में यानि 19वीं सदी के दरमयान में मोरोवियन मिशन लाहुल आए और उन्होंने केलंग स्पिति, किन्नौर और लद्दाख में अपने कदम जमाए। जिन्होंने इन इलाकों और जगहों के सामाजिक इतिहास लिखे, परन्तु लोगों को ईसाई धर्म में तबदील करने में कामयाबी हासिल नहीं हुई। **Jaecbke, Friedrich, Redslob Heirich, Angust, Aredslob, Hetach** जैसे बहुत पढ़े लिखे और उत्साह रखने वाले ईसाई मिशनरी के बड़े सुलझे हुए लोग थे जिन्होंने केलंग में मिशन हैडक्वाटर कायम किए। और ज़ोरो–शोर से बड़े उत्साह के साथ काम शुरु किए जिन्होंने प्राइमरी स्कूल केलंग, ठोलंग और गौशाल में कायम किए; आम लोगों के लिए तन्दूर या धुआं रहित चूल्हा, स्वेटर, जुराब की बुनाई लोगों को सिखाए।

आलू भी इनकी देन है। घरों में खिड़कियों को रखने के लिए ज़ोर दिया। ये उनकी देन थी। लोग इनके इस नेक काम को भूल नहीं सकते।

परन्तु वे यहां के लोगों को ईसाई धर्म की तरफ खींचने और मनवाने में नाकामयाब रहे और 1940 को अपने देश चले गए। एक और मिशनरी जिसका ज़िक्र किए बगैर मैं नहीं रह सकता वह थे – हरमन फ्रैंक जो किन्नौर, स्पिति, लद्दाख जगहों में खूब घूमे। जो अंग्रेज़ सरकार के मुलाज़िम थे। जो पुरातात्विक खोज करने आए थे। उनका एक अच्छा काम यह था एक किताब एंटिक्विटीज़ ऑफ इंडियन टिबेट लिखी, जिसे आज भी विद्वान लोग ढूंढ़ते हैं। इसके इलावा विलियम मूरक्राफ्ट (1767 से 1825 तक) जो अंग्रेज़ यात्री घुमक्कड़ थे। जिन्होंने 2000 मील पद यात्रा किया। जो उन कठिन और दुर्गम घाटी में पैदल सफर करने से थकते नहीं थे। इन्होंने विस्तृत तौर पर सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक हालात पर रोशनी ड़ाली जो उन दिनों में उन इलाकों में प्रचलित थे। मिस्टर गुस्सेट टुची (1894 से 1984) जो एक हिन्दुस्तानी विद्वान थे, ने बहुत से जगहों में पैदल यात्रा की। खासकर पश्चिमी हिमालय और कई दिनों तक किन्नौर, स्पिति और लद्दाख में गुज़ारे। उन्होंने मठों, गोम्पों की कला, इतिहास, साहित्य, दर्शन, बुद्ध मत का वैज्ञानिक तौर पर अध्ययन किया।

प्रसिद्ध पुस्तक जिसका शीर्षक मोनेस्ट्रीज़, आर्ट, हिस्ट्री वोल्यूमज़ है को अनुसंधान करने वाले विद्वान बड़े शौक से पढ़ते हैं। ब्रिटिश नौकरशाही जिन्होंने इन इलाकों का दौरा किया पैदल और कठिन रास्तों, घोड़ों से सवारी की उन्होंने जो मसौदा और रोज़नामचा लिखे, वह उन दिनों के इलाकों के रहन–सहन के बारे खास कर सामाजिक, आर्थिकी और उन दिनों लोग कैसे जिन्दगी बसर करते थे, का एक आईना पेश करते हैं। हरकूट जो कुल्लू के असिस्टेंट कमिश्नर थे, ने भी लाहुल स्पिति के बारे में अपने दौरे के दौरान जो टूर नोट लिखे हैं, वह उन दिनों के हालात को ज़ाहिर करते हैं। मिस्टर इगरस्टन पहले डी.सी. काँगड़ा थे, जो पहली दफा स्पिति 1863 में दौरे पर गए थे और मिस्टर रूडयार्ड किपलिंग जिन्होंने स्पिति का दौरा किया, ने स्पिति के दैनिक जीवन के बारे सम्पूर्ण विवरण अपने रोज़मर्रा की डायरी में लिखे हैं। यानि स्पिति के लोग कैसे ज़िन्दगी बसर करते हैं, उनके सामाजिक जीवन पर रोशनी ड़ाली है।

राहुल साँकृत्यायन जो एक बहुत बड़े घुमक्कड़ और संत भिक्षु थे, तिब्बत लाहुल स्पिति, कुल्लू हिमाचल प्रदेश लद्दाख क्षेत्र में घूमे थे। वह संस्कृत पाली, हिन्दी और तिब्बतन के बहुत बड़े विद्वान थे। उन्होंने हिमालय के मुश्किल जगहों की पैदल यात्रा की। उन्होंने दस बार हिमालय के कोने–कोने में पैदल यात्रा की। खासकर 1926–1956 के बीच सालों के दौरान उनको हिमालय रेंज के शान्त वातावरण, गगनचुम्बी पहाड़ों को देखकर, उस पर बर्फ के ढ़ेर, पहाड़ों पर बर्फ से ढ़के नज़ारों को, लोगों की सादगी, ईमानदारी देखी साथ ही उन्हें कपट और फरेब से दूर देखा।

मानवतावादी राहुल जी सारे संसार को अपना घर समझते थे और मानते थे, लेकिन

उन्होंने बहुत से जगहों पर यह साफ तौर पर कहा कि हिमाचल प्रदेश उनसे भी खासतौर पर लाहुल–स्पिति उनका दूसरा घर था। लाहुल स्पिति और कुल्लू वादी के इतिहास, तहज़ीद व तमद्दुन और संस्कृति के प्रेमी होने के साथ साथ हिमाचल के आर्थिक प्रगति की वह आकांक्षा रखते थे। कुल मिलाकर उन्होंने हिमाचल प्रदेश का दस बार भ्रमण किया था। लाहुल–स्पिति, लद्दाख में कई बार घूमे। प्रदेश के पौराणिक, ऐतिहासिक, भौगोलिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, भाषायी, सामाजिक आदि सभी तरह के अध्ययन किए। पहली यात्रा 1926 में लद्दाख से लाहुल स्पिति, किन्नौर, रामपुर, कोटगढ़ के रास्ते शिमला तक की थी। दूसरी यात्रा उन्होंने दोबारा 1933 में लद्दाख से लाहुल आए। गैमूर के ठाकुरों ने उनकी आवभगत की, केलंग में डा0 भगवान सिंह बौद्ध से मुलाकात हुई, जो उन दिनों कट्टर आर्य समाजी थे। उनको बुद्ध धर्म में आने की प्रेरणा दी, इस तरह डाक्टर बौद्ध कहलाए। जहाँ उन्होंने दो ईसाई धर्म मानने वाली लड़कियों से विवाह किए। उनकी पुत्री लता ठाकुर ने पढ़ाई खत्म कर के ठाकुर मंगल चन्द के पुत्र निहाल चन्द से विवाह किया। वह हिमाचल विधानसभा में सदस्य रही, और 1976 में एक कार दुर्घटना का शिकार हो गईं। वह एक गतिशील व्यक्तित्व की स्वामिनी थी। तीसरी यात्रा राहुल जी ने 1937 में भिक्षु आनन्द के साथ की और लाहौर से पठानकोट होते हुए कुल्लू पहुँचे, जहाँ वह मशहूर रूसी चित्रकार निकोलस रिओरिक व उनके दोनों पुत्रों के साथ मिले और फिर जोगिन्द्रनगर होते हुए पटना लौट गए। चौथी बार 1948 में शिमला के रास्ते रामपुर, किन्नौर, कुल्लू पहुँचे। जहाँ ज़ंस्कर और लद्दाख से कबाईली और पाकिस्तानी लुटेरे फौजियों के सताए हुए रिफ्यूजियों के लिए कुल्लू में कुछ समय के लिए डा0 बौद्ध के साथ मिलकर और केन्द्र सरकार और पंजाब सरकार से मिलकर कुछ समय रिफ्यूजी कैम्प खोलकर उन रिफ्यूजियों की मदद की। जहां मैं खुद लद्दाख और ज़ंस्कर से आए हुए रिफ्यूजियों की लिस्ट बनाकर उनको और, कुल्लू के **Assistant Comissioner** को भेजता रहा। मुझे लेह लद्दाख से केलंग आने वाली सैनिक डाक व्यवस्था को सुचारु रखने और आगे भेजने का काम 2/8 गोरखा रैज़िमेंट के कमाण्डर मेजर हरी चन्द के आदेश से सौंपा गया था। साथ ही लेह और ज़ंस्कर से आने वाले शरणार्थियों को कुल्लू शरणार्थी कैम्प में भेजने की ज़िम्मेवारी भी मुझ पर थी। चौथी बार हिमाचल के प्राकृतिक सौन्दर्य ने उनको फिर मण्डी, कुल्लू, मनाली आने को मजबूर किया। देवदार के घने जंगलों ने उनके मन–प्राणों को आकर्षित कर लिया था। एक बार राहुल जी सदा के लिए हिमाचल में बस जाना चाहते थे, खासकर कुल्लू वादी में। राहुल जी को मैं निजी तौर पर जानता था। वह हिमालयन बुद्धिस्ट सोसायटी मनाली और बौद्ध मन्दिर के अध्यक्ष भी रहे। और मुझे फक्र है उसी सोसायटी के जनरल सैक्रेटरी बनने का।

लाहुल वादी को गर्व है कि यहाँ महान हस्ती रास बिहारी बोस फक्रे वतन देहली चाँदनी चौक के करीब लार्ड हार्डिंग वायसराय पर बम फैंकने के बाद गुमनाम हो गए थे। और करीब आठ महीने केलंग डाकखाने के बाबू टुकटुक के घर रहे। जब उन्हें

मालूम हुआ कि ब्रिटिश सरकार के सी.आई.डी. के लोग उन तक पहुँचने की कोशिश कर रहे हैं, तो वह तिब्बत के रास्ते कठिन और दुर्गम रास्तों को तय कर के जापान पहुँचे और महान देशभक्त सुभाष चन्द्र बोस के साथ मिल कर इण्डियन नैशनल आर्मी की स्थापना की ताकि मादरे वतन भारत को ब्रिटिश हुकूमत से मुक्ति दिला सकें। उन दिनों द्वितीय विश्वयुद्ध ज़ोरों पर था, एक वाकया जिसे मैं और दूसरे बुज़ुर्ग लोग याद करते हैं कि एक महान हस्ती 1946 में तिब्बत के रास्ते केलंग पहुँचे। फिर लोगों से पूछताछ किया कि लाहुल में पढ़े लिखे युवा किस कदर हैं। उन दिनों लाहुल आर्थिक और विकास के लिहाज़ से अनपढ़ता, वहमपरस्ती हर तरह से पिछड़ा हुआ था। केलंग में लोगों ने उनको बताया कि लाहुल में दो ग्रेजुऐट हैं जो लाहौर डिग्री कॉलेज के स्नातक हैं, गौशाल और जाहलमा गाँव के निवासी हैं, जो आजकल अपने गांव में रहते हैं। वह गौशाल ठाकुर देवी सिंह के घर 17–18 दिन ठहरे। उसके बाद जाहलमा गाँव खुद ही पहुँच गए और करीबन 2 सप्ताह मेरे घर ठहरे। हमने देखा कि वह एक कशिश वाली शख्सियत के मालिक थे। इस तरह काफी अरसा ठहरने के बाद वह कुल्लू पहुँचे, जहाँ वह नगर में पंजाब सरकार के ओवरसियर के घर ठहरे।

ठाकुर भगतराम बी0 ए0 को उनके व्यक्तित्व के बारे में पता चला तो उनसे मिलने के लिए बेताब हुए और उन्होंने पूछा भी, क्या आप सुभाष बोस हैं? तो उन्होंने ऐसे प्रश्न करने से मना कर दिया। वक्त गुज़रता गया और उस स्वामी ने कुछ दिनों के बाद कुल्लू से जाने का इरादा किया, भगतराम ने उनके करीब रह कर काफी सेवा की। और उस स्वामी ने कहा कि मेरा एक साल के बाद तुम्हें खत आएगा, तुम मुझसे मिलने आना। ठीक एक साल के बाद भगतराम को खत मिला और भगतराम उनको मिलने को चला गया, जहाँ वह एक महीने के करीब ठहरे। और वह शालमरी आश्रम जो उड़ीसा में है, ठहरे। आम लोगों का एक ख्याल रहा कि वह सुभाषचन्द्र बोस ही थे। उनके सगे सम्बन्धी बंगाल से उनसे मिलने भी आए थे। जहाँ उन्होंने इशारों में बताया कि वह शालमरी के स्वामी सुभाष मालूम पड़ता है। मुझे भी ऐसा लगता है कि उनकी हवाई जहाज़ के हादसे से मरने की खबर गलत है क्योंकि जो मुसलमान (नाम याद नहीं) उनके साथ सफर कर रहा था वह मरा नहीं था। मुझे पक्का यकीन है कि वह व्यक्ति जो लाहुल रहा वह सुभाष ही था।

एक और खास खबर जो मुझे कुछ दिनों पहले केलंग रहने के समय मिली थी कि महान रुसी चित्रकार निकोलाई रोरिक चार वर्षों तक केलंग में 'अमेरिकन साहब' के नाम से रहे। बाद में वे कुल्लू के नग्गर गांव में जा कर रहने लगे। इस तरह मैंने यहां बीते ज़माने के लाहुल और वक्त–वक्त पर यहां आने वाले महान शख्सियतों के बारे में एक खाका पेश करने का प्रयास किया है।

❋❑❋❑❋❑❋

काला एवं सफेद मोतियाबिन्द

डा॰ रवीन्द्र शाशनी

काला मोतिया बिन्द ऐसी बीमारी है जिस से अन्धापन आने पर उसका कोई उपचार नहीं है। इसलिए इस बीमारी का निदान अन्धेपन होने से पहले हो तो उसका उपचार हो सकता है और अन्धेपन से बच सकते हैं। काला मोतिया बिन्द तीन प्रकार का होता है :–

1) **बचपन में पाऐ जाने वाला** :– जो कि जन्मजात आंख की बनावट की वजह से ही होता है। इसमें बच्चा पैदा होते ही आंखों से पानी बहता है व धूप को नहीं देख पाता, धीरे–धीरे आंख का आकार बड़ा होने लगता है और आंख की नस जिसे optic nerve कहते हैं उसके सैल मर जाते हैं और बच्चा अन्धा हो जाता है। इसमें दर्द नहीं होता है। इसके लिए जल्द से जल्द आंखों के सर्जन को दिखाएं, इस का उपचार सिर्फ ओपरेशन है।

2) **दूसरा है *narrow angle glaucoma*** : यह साधारणतया 60 साल से उपर की उम्र के आस–पास होता है। इसमें लोगों की आंख का आकार छोटा हो जाता है तथा तेज़ दर्द के साथ उल्टी होती है, आंखें लाल हो जाती हैं। इसका इलाज लेज़र से या ऑपरेशन द्वारा किया जाता है। आरम्भ में दवाई भी दी जाती है पर सही ईलाज लेज़र या ऑपरेशन ही है।

3) **तीसरा है *open angle glaucoma*** : इसमें बिना दर्द के नज़र चली जाती है। यह भी 50 साल की उमर के बाद होता है। शूगर के मरीज़ में ज़्यादा संभावना रहती है। इस रोग के लिए डॉक्टर से नियमित जांच ज़रूरी है। मरीज़ प्रायः शिकायत करता है कि उस के चश्मे का नम्बर बदल गया है क्योंकि उसमें दर्द न होने के कारण लोगों को ऐसा लगता है। इसमें अन्धेपन की समस्या ज़्यादा रहती है।

इसमें आंख के अन्दर पानी का बहाव रुक जाता है, और धीरे–धीरे आंख की नस (optic nerve) को खत्म कर देता है।

इसकी जांच के लिए आंख की नस की जांच, आंख के अन्दर प्रेशर की जांच व नस की कीशिकाओं को मरने से आई खराबियों की जांच होती है। उपर दो की जांच तो हर ज़िला अस्पताल में उपलब्ध है मगर field charting और F.D.T., Heidelbergi tomogram जैसे टेस्ट बड़े संस्थान में ही उलपब्ध हैं।

इसकी प्रारंभिक उपचार तो दवाईयों से होता है, मगर सिर्फ दवाईयों के सहारे

इसका पूर्ण इलाज नहीं हो सकता, बाकी जांच भी बहुत ज़रूरी है। पी.जी.आई. चण्डीगढ़ या अन्य किसी बड़े संस्थान में इस तरह के काले मोतियाबिन्द वालों को अपना नाम पंजीकृत करवाकर नियमित हर महीने के अन्तर में जांच करवानी चाहिए। क्योंकि आंख के अन्दर का प्रेशर न्यूनाधिक होता रहता है व खून की आपूर्ति व ब्लड प्रैशर के उतार चढ़ाव व शूगर भी नस को प्रभावित करता है।

इसके ओपरेशन भी हैं मगर यह भी पूर्ण इलाज नहीं है क्योंकि ओपरेशन करने भर से इस बीमारी से निजात नहीं मिलती।

इसका ईलाज सिर्फ नियमित जांच व दवाइयों का सही इस्तेमाल है।

इसके लिए लेज़र भी है पर परिणाम ओपरेशन जैसा ही है। जिस भी मरीज़ को काला मोती हो उसे नियमित डाक्टर के कहे अनुसार चलना चाहिए। हो सके तो पी.जी आई. जैसी जगह पर अपना नाम पंजीकृत करवा लें क्योंकि वहीं पर सब तरह के टेस्ट उपलब्ध हैं।

काला मोती की आरंभ में ही पहचान हो जाए, और सही इलाज किया जाए तो अन्धापन से शत प्रतिशत बच सकते हैं।

इसके अलावा दूसरी आंख की बिमारियों की वजह से भी काला मोती हो सकता है। जैसे सफेद मोती के बड़ा होने पर, शूगर व आंख के अन्दर खून की नस फटने से, या neovascular glaucoma जैसी कई बिमारियां हैं जिनसे काला मोती हो जाता है। इसको secondary glaucoma कहते हैं। इस तरह के काले मोती का इलाज प्रारम्भिक वजह की उपचार करना होता है जैसे सफेद मोती का वक्त पर ईलाज, आंख के पर्दे की बिमारियां जैसे शूगर, या नस के फटने का लेज़र से पर्दे का इलाज, uveitis का सही ईलाज इत्यादि करने से secondary glaucoma होगा ही नहीं और इस तरह का काला मोती आने की सम्भावना भी नहीं रहेगी।

सफेद मोती

सफेद मोती, जब आंख के लैंज़ का रंग सफेद हो जाता है तो इसे सफेद मोती कहते हैं, इसके सफेद होने से किरणें आंख के दृष्टि पटल पर नहीं पड़ती हैं। इस वजह से दिखना बन्द हो जाता है। मगर सारे Cataract (सफेद मोती) सफेद नहीं होते सिर्फ Cortical cataract ही सफेद होता है, अन्य तरह के Cataract सफेद नहीं होते हैं, मगर यह अपारदर्शी होने से दृष्टि नहीं आती।

कारण :– सफेद मोती प्रायः बड़े उम्र वालों को होता है मगर कुछ शारीरिक बीमारियों के कारण यह जल्दी आ जाता है जैसे मधुमेह, Hypothyroid, परा बैंगनी किरणें, विषाक्त पदार्थ जैसे कीटनाशक, फफूंद नाशक दवाईयां इत्यादि। गर्म कारखाने जैसे शीशा बनाने वाले जहां का तापमान बहुत अधिक हो जाता है। कुछ जन्म से पहले बच्चों में मां के गर्भ में बीमारियों की वजह, व जन्म के बाद पोषण की कमी व बीमारियां जैसे विषाणु रोग व चोट आदि से संक्रमण।

उपचार :– इसके लिए कोई दवाई काम नहीं करती, इसके लिए सिर्फ ऑपरेशन ही ईलाज है। भिन्न–भिन्न तरह की तकनीक से आपरेशन होते हैं, जैसे **intra caspsular, extra capsular, small incisional cataract** इन्सीजिनल (छोटा चीरा)।

1. **Intra capsular** में तो पूरा लैंज़ **Capsule** समेत निकाला जाता है। लैंज़ के अन्दर **nucleus** होता है। बाहर **cortex** इन को **overlap** करता है। **capsule** तो **intre-capsule** में सारा लेंज़ बाहर निकाल देते हैं, इस ओपरेशन का नुकसान बाहिरी पर्दे में सूजन, इसी वजह से ऐसे मरीज़ की 2–4 सालों के बाद नज़र पर असर पड़ जाता है। और इसका कोई ईलाज भी नहीं है।

2. जो सबसे बड़ा नुकसान है वह है आंख के अन्दर पानी का हिलना, जिसकी वज़ह से आंख सदा लाल रहती है, क्योंकि **vitrecous** आंख को **irritate** करता है और कई लोगों को काला मोती भी हो सकता है। और लैंज़ जो लगाया जाता है उसकी वजह से **corrnea** में सूजन आ जाती है और कइयों को तो फिर से **corrne** का **kerathoplasty** कराने की नौबत तक आ सकती है। इसी वजह से यह ओपरेशन **outdated** हो गया है।

Extre Capsular : इसमें **posterior capsule** को छोड़ देते हैं और लैंज़ इसी के ऊपर टिकाते हैं। यह अच्छा ओपरेशन है मगर इसमें चीरा ज़्यादा लम्बा होने से चश्मा लगाना पड़ता है। कइयों में इतना **high cylender** होता है कि चश्मा लगा कर भी साफ नज़र नहीं आता।

Small Incision : छोटा चीरा आजकल जिनके पास **Phaco-emulsificate** मशीन नहीं है वह यह ओपरेशन कर रहे हैं। नाम से ही ज़ाहिर है कि छोटा चीरा।

Phaco - यह आज के युग का आधुनिकतम तरीका है। इसमें 3 मिलीमीटर का चीरा लगता है। इसमें मशीन द्वारा **nucleus** को चूरा–चूरा करके चूस लेते हैं और इसकी जगह लैंज़ जो **foldable** होता है, डालते हैं और मरीज़ जल्दी ठीक होकर काम पर जाता है और चीरा छोटा होने से टांका भी नहीं लगता।

❋❑❋❑❋❑❋

लाहौल घाटी की कुछ औषधीय वनस्पतियां

1	पटनी बोली में नाम	:	*धूप
	हिन्दी में नाम	:	धूप, गुग्गल
	वैज्ञानिक या लेटिन में नाम	:	Jurinea macrocephela
	औषधीय गुण	:	पेट दर्द, बुखार, शूल में काढ़ू पिलाने से लाभ होता है। जड़ें पीसकर फुन्सियों में प्रयोग की जाती हैं।
2	पटनी बोली में नाम	:	*चोंरा
	हिन्दी में नाम	:	चोंरा
	वैज्ञानिक या लेटिन में नाम	:	Angelica glauca
	औषधीय गुण	:	जड़ें उद्दीपक हैं। बदहजमी, पेट दर्द में लाभप्रद।
3	पटनी बोली में नाम	:	*खामेग
	हिन्दी में नाम	:	रतनजोत
	वैज्ञानिक या लेटिन में नाम	:	Anemone obtusiloba
	औषधीय गुण	:	इस का तेल गठिया में लाभप्रद है। यह ऊनी रेशमी वस्त्र के रंग बनाने तथा तेलों को रंगने में प्रयुक्त होता है। इसमें कीटनाशक क्षमता पाई जाती है।
4	पटनी बोली में नाम	:	*कडू
	हिन्दी में नाम	:	कडू
	वैज्ञानिक या लेटिन में नाम	:	Picrorhiza kurrooa
	औषधीय गुण	:	जड़ें ज्वर, सूजन, खाँसी, पेट के रोगों में उपयोगी हैं।
5	पटनी बोली में नाम	:	कूंठ
	हिन्दी में नाम	:	कुठ
	वैज्ञानिक या लेटिन में नाम	:	Saussurea costus
	औषधीय गुण	:	जड़ें दमा, खांसी, गठिया, हेजा रोग में लाभकारी। जड़ैं उद्दीपक हैं।
6	पटनी बोली में नाम	:	*बोडा
	हिन्दी में नाम	:	पतीश
	वैज्ञानिक या लेटिन में नाम	:	Aconitum voilaceum
	औषधीय गुण	:	जड़ें मधुमेह, बहुमूत्र, सर्दी बुखार, अधिक प्यास, उल्टी, खाँसी तथा श्वास रोगों में लाभप्रद है।
7	पटनी बोली में नाम	:	*ओमो षे (श्रे)
	हिन्दी में नाम	:	वन ककड़ी
	वैज्ञानिक या लेटिन में नाम	:	Podopphyllum emodii
	औषधीय गुण	:	जड़ें उद्दीपक हैं। यह चर्म कैंसर की उत्तम दवा है।
8	पटनी बोली में नाम	:	*पंजा
	हिन्दी में नाम	:	हथ पंजा, सालम पंजा
	वैज्ञानिक या लेटिन में नाम	:	Dactylorhiza hatagirea
	औषधीय गुण	:	जड़ें शुक्रदौर्बल्य, प्रसूता की कमजोरी दूर करने तथा अधरंग की उतम दवा है।
9	पटनी बोली में नाम	:	करेट्रा
	हिन्दी में नाम	:	इस्बगोल
	वैज्ञानिक या लेटिन में नाम	:	Plantago major
	औषधीय गुण	:	हाजमी ठीक करने में लाभप्रद। पत्ते जख्मों और सूजन में लाभप्रद है। बीज पेचीश, पेशाब रोग में लाभप्रद तथा बलवर्धक हैं।

10 पटनी बोली में नाम : जीरा
हिन्दी में नाम : जीरा काला
वैज्ञानिक या लेटिन में नाम : Carum carvi
औषधीय गुण : बीज अजीर्ण, पेटदर्द, शूल, दंत पीड़ा में लाभप्रद हैं। स्त्रियों को गर्भाशय पीड़ा में कवाथ में बिछाने व शर्बत पिलाने से लाभ होता है।

11 पटनी बोली में नाम : छुन्छुरू
हिन्दी में नाम : गुच्छी
वैज्ञानिक या लेटिन में नाम : Morchella esculanta
औषधीय गुण : कामोद्दीपक तथा प्रभोलक (मादक) है।

12 पटनी बोली में नाम : ज़ुरचा
हिन्दी में नाम : भुस्से
वैज्ञानिक या लेटिन में नाम : Artemisia brevifelia wall
औषधीय गुण : इसमें पाया जाने वाला सेन्टोनिन तत्व कृमिनाशक है।

13 पटनी बोली में नाम : भुचुर
हिन्दी में नाम : सोमलता
वैज्ञानिक या लेटिन में नाम : Ephadra geradiana wall
औषधीय गुण : इसमें पाया जाने वाला इफैड्रनि तत्व दमा और श्वास रोगों में लाभप्रद है।

14 पटनी बोली में नाम : र्‌वासल
हिन्दी में नाम : पतराला, पदाड़ा
वैज्ञानिक या लेटिन में नाम : Heracleum candicans wall
औषधीय गुण : इसका जेन्थोटाक्सीन तत्व ल्यूकोडरमा (श्वेत चर्म रोग) तथा त्वचा रोग की विशेष दवा है।

15 पटनी बोली में नाम : ज़ूफा
हिन्दी में नाम : टेंगू, ट्यांगू
वैज्ञानिक या लेटिन में नाम : Hyssopus officinalis Linn
औषधीय गुण : पौधे का फूल युक्त ऊपरी भाग तिब्बती औषधियों में कैंसर के इलाज में प्रयुक्त होती है।

16 पटनी बोली में नाम : शूर
हिन्दी में नाम : देवदार
वैज्ञानिक या लेटिन में नाम : Juniperus macropoda Linn
औषधीय गुण : इसमें जूनीपेरिन नामक तत्व पाया जाता है। फलों से प्राप्त तेल ड्राई जिनमें प्रयुक्त होत' है। इसका तेल वात निवारक, उतेजक, मूत्रवर्धक व पेशाव रोग में लाभप्रद है। इसके बीज आयुवेद में हाऊबेर के रूप में मांगे जाते हैं।

17 पटनी बोली में नाम : सल्ला
हिन्दी में नाम : सर्ला, सीवकथोर्न
वैज्ञानिक या लेटिन में नाम : Hippophae rhamnoides
औषधीय गुण : इसके फलों में उच्च मात्रा में कार्बोज जैविक अम्ल, अमिनों अम्ल तथा विटामिन पाये जाते हैं। विटामिन बी. तथा सी. का अति उतम स्त्रोत है। बीटा केराटीन भी उच्च मात्रा में पाया जाता है।

18 पटनी बोली में नाम : बीण
हिन्दी में नाम : धनिया
वैज्ञानिक या लेटिन में नाम : Coriadrum sativum Linn
औषधीय गुण : नेत्र रोगों, ज्वर, अतिसार, अजीर्ण, जोड़ों के दर्द तथा पाचन शक्ति बढ़ाने में लाभप्रद है।

19 पटनी बोली में नाम : रागस अरचा
हिन्दी में नाम : मजीठ, मञ्जिष्ठा
वैज्ञानिक या लेटिन में नाम : Rubia cardifolia Linn
औषधीय गुण : रक्त शोधक, ग्राही पौष्टिक और चर्मरोग नाशक है।

20 पटनी बोली में नाम : शब्ला
हिन्दी में नाम : गुलाब
वैज्ञानिक या लेटिन में नाम : Rosa centifolia Linn
औषधीय गुण : पेट साफ करने, भूख बढ़ाने, शरीर पुष्ठ करने और नेत्र रोग में लाभकारी है।

21 पटनी बोली में नाम : शक
हिन्दी में नाम : भोज
वैज्ञानिक या लेटिन में नाम : Betula uttils D.Don
औषधीय गुण : इस का क्वाथ कान बहने में लाभप्रद है तथा पित ज्वर में क्वाथ का सेवन लाभप्रद है।

22 पटनी बोली में नाम : का
हिन्दी में नाम : अखरोट
वैज्ञानिक या लेटिन में नाम : Juglans regia Linn
औषधीय गुण : इसमें विटामिन ए. बी. सी. लेसिथीन तथा अनेक खनिज पदार्थ पाये जाते हैं। यह जोड़ों के दर्द में लाभप्रद है।

23 पटनी बोली में नाम : गाजरा
हिन्दी में नाम : गाजर
वैज्ञानिक या लेटिन में नाम : Daucus carota var savita D.E.
औषधीय गुण : इसमें प्रोटीन, काबोर्ज, रेशा फोस्फोरस लोहा विटामिन ए. बी. सी. तक्षा डी. पाये जाते हैं।

24 पटनी बोली में नाम : बोहूडू
हिन्दी में नाम : गेंदा, झण्डू
वैज्ञानिक या लेटिन में नाम : Tageteserecta Linn
औषधीय गुण : पत्तों का रस कर्ण रोग तथा फूलों का रस रक्त विकार में लाभ प्रद है।

25 पटनी बोली में नाम : पदीना
हिन्दी में नाम : पुदीन, पुदीना
वैज्ञानिक या लेटिन में नाम : Mentha uiridis
औषधीय गुण : पत्ते पीस कर दर्द वाले अंग पर लेप करने से लाभ मिलता है। पेट का गैस, अतिसार, कृमि रोग में लाभप्रद है। यह भोजन में रूचि बढ़ाने वाला है।

26	पटनी बोली में नाम	:	केसर
	हिन्दी में नाम	:	केसर, जाफरन
	वैज्ञानिक या लेटिन में नाम	:	Crocus sativus Linn
	औषधीय गुण	:	नाड़ी शक्ति उतेजक, भूखवर्धक, बच्चों के जुकाम दूर करने में लाभप्रद है।
27	पटनी बोली में नाम	:	अरछो
	हिन्दी में नाम	:	रेवन्द चीनी
	वैज्ञानिक या लेटिन में नाम	:	Rheum australe D.Don
	औषधीय गुण	:	जडों में इमोडिन, एन्थ्राक्वीनोन तत्व पाये जाते हैं। गठिया वात, चोट, घाव, पेट रोग की अचूक दवा है। इसका लेप टिंकचर आयोडीन की तरह उपयोगी है।
28	पटनी बोली में नाम	:	गोक्पा
	हिन्दी में नाम	:	लहसुन
	वैज्ञानिक या लेटिन में नाम	:	Allium sativum
	औषधीय गुण	:	हृदय रोग, पाचन, गठिया, सायटिका, पेट में गैस आदि में बहुत लाभप्रद है।
29	पटनी बोली में नाम	:	होप्स
	हिन्दी में नाम	:	होप्स
	वैज्ञानिक या लेटिन में नाम	:	Humulus Lupulus L
	औषधीय गुण	:	इसका प्रयोग टॉनिक, पेट की सफाई के लिये और हल्के मादक प्रदार्थ के रूप में किया जाता है। इसमें पाये जाने वाले अल्फा तथा बीटा अम्ल सूक्ष्म जीवाणु नाशक गुण होते हैं।
30	पटनी बोली में नाम	:	चकोरी
	हिन्दी में नाम	:	चकोरी
	वैज्ञानिक या लेटिन में नाम	:	Cichorium intybus Lin
	औषधीय गुण	:	यह रक्त शोधक, चर्म रोग, भूख बढ़ाने, पित्त, यकृत और गुर्दे के क्रिया को बढ़ाने में लाभप्रद है। इसे यकृत का मित्र भी कहा जाता है।

लाहौल घाटी अपनी तरह की एक अदभुत घाटी है। यहां अनेकों प्रकार के औषधीय वनस्पति पाए जाते हैं। इन सबका विवरण और औषधीय गुणों का विवरण दे पाना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। हमारी अज्ञानता एवं लापरवाही के कारण कुछ वनस्पति (जो * द्वारा चिन्हित हैं) लुप्त होने के कगार पर पहुँच चुके हैं। हमें उन्हें संरक्षित कर अपनी लाहौल घाटी की अद्‌भुता को बनाए रखना है।

अपनी सीमित जानकारी एवं साधनों की सहायता से लाहौल घाटी के कुछेक वनस्पति का विवरण प्रस्तुत लघु लेख द्वारा देने का जो प्रयास मैंने किया है, आशा है कि हमारे पाठकों को प्रेरणा देगा और अधिक जानकारी और सूचनाएं एकत्रित करेंगे। प्रस्तुत लघु लेख में वनस्पति का नाम पटनी बोली में लिखने का प्रयोजन था कि पटनी बोली लाहौल के अधिक क्षेत्रों में अधिक लोगों द्वारा बोली जाती है। पिर छोटे-छोटे क्षेत्रों में बोली जाने वाली भिन्न-भिन्न बोलियों में वनस्पति का नाम लिखना भी दुष्कर है।

प्रबुद्ध पाठकों द्वारा लेख सम्बन्धित त्रुटियों ध्यान में लाई जाती है तो अति स्वागत योग्य है।

आशा है मेरा यह तुच्छ प्रयास पाठक पसंद करेंगे।

- बलदेव रापा

❋❑❋❑❋❑❋

कुल्लू जनपद में नागों और अप्सराओं का वर्चस्व

पांचवी कड़ी

- तेज राम नेगी,
बबेली, कुल्लू।

गत अंक में आपने पढ़ा-

काली-नाग का एक साधू-महात्मा का भेष धारण करना तथा भिक्षाटन हेतु एक बहुत बड़े गांव की ओर प्रस्थान। गांव के एक बहुत बड़े एवं सम्पन्न घर ठाकुर निवास परिसर से भिक्षा की याचना करना, परन्तु वहां से पका पकाया भोजन न मिलने से निराश होकर गांव के अन्य घर की ओर प्रस्थान करना।

गतांक से आगे-

तत्पश्चात् उस महात्मा ने 'ठाकुरवाड़ी' (ठाकुर-निवास परिसर) से निराश होकर गांव के अन्य घर की ओर रुख किया फिर प्रत्येक घर के सामने जाकर अपनी अलख जगाकर भोजन और जलपान के लिए याचना करता रहा किन्तु सब ने भोजन बना कर देने की व्यवस्था न होने का कोई न कोई बहाना बनाया तथा किसी न किसी बहाने से उसे अपने घर के सामने से टरकाते रहे। महात्मा को ऐसा आभास हो रहा था कि इस गांव में अतिथि-सत्कार, तथा उसके प्रति श्रद्धा की भावनाएं लुप्त हो गई हैं तथा इसके स्थान पर इस गांव के लोग दम्भी, विलासी और आलसी बनते जा रहे हैं, उसे ऐसा भी नहीं लगा कि इस गांव के लोग निर्धन हैं जो किसी अतिथि को एक समय के भोजन की व्यवस्था की सामर्थ्य न रखते हों। लगभग सभी परिवार सम्पन्नता का आभास दे रहे थे।

मन ही मन में महात्मा यह सोचता जा रहा था कि एक समय के भोजन की याचना करने पर भी लगभग 100–150 सम्पन्न घर-परिवारों से युक्त इस गांव के किसी परिवार के सदस्य ने उसे आदर के साथ आमन्त्रित नहीं किया। अतिथि को जलपान कराना भी उन्हें भारी कष्ट अनुभव हो रहा था। प्रत्येक घर में जलपान की समुचित व्यवस्था होने पर भी मुझे गांव में पानी भरने की बावड़ी की ओर प्रेरित किया। वह सोचने लगा कि जब कोई मनुष्य धन-धान्य से सम्पन्न हो जाता है उसमें मानवीय गुणों का ह्रास होने लगता है। वे लोभी, लालची, अभिमानी, एवं भ्रष्ट-आचरण जैसे अवगुणों की ओर फिसलने और डूबने लगते हैं। दम्भ में आकर उनमें लोक-परलोक का तनिक भी ध्यान नहीं रहता।

इसी सोच-विचार में डूबा हुआ वह सन्यासी सम्पन्न-घरों से भिक्षा की याचना से निराश होकर गांव के अन्तिम छोर पर एक झोंपड़ी-नुमा घर के सामने जाकर फिर से आशा भरी एक अलख जगाई-"भिक्षाम् देहि!" एक भिक्षुक की याचना भरी अलख सुनते ही एक अधेड़ आयु की महिला घर से बाहर निकली और अपने घर के आंगन में एक सन्यासी को देख कर उसे साष्टांग प्रणाम किया और एक स्वच्छ सा कुशासन विछा कर उस महात्मा को आसन ग्रहण करने के लिए आग्रह किया और दोनों हाथ जोड़ कर विनती की-"हे ब्रह्म-देवता! मेरी छोटी सी इस कुटिया में आपका हार्दिक स्वागत है, कृपया आसन ग्रहण करें। मुझे ऐसा लग रहा है कि आप अपनी यात्रा से अधिक थके हुए हैं और भूख-प्यास से भी व्यथित हैं। यदि आप मुझे आतिथ्य-सेवा करने की सहर्ष अनुमति दें तो मैं यथासम्भव रूखी-सूखी रोटी के टुकड़ों से आपकी क्षुधा-शमन हेतु भोजन एवं जलपान का प्रबन्ध करूँगी। प्रायः साधू-महात्मा सज्जन लोग मेरी निर्धन-अवस्था देख कर मेरा आतिथ्य ग्रहण करने से संकोच करते हैं।

महात्मा ने आसन ग्रहण करने के उपरान्त उसे आशीर्वाद देकर कहा-"देवी तुम्हारा कल्याण हो! प्रथम दृष्टि में मुझे भी ऐसा ही लगा कि तुम धन-धान्य के

अभाव से पीड़ित हो, परन्तु तुम इस बात की चिन्ता करनी छोड़ दो कि मैं निर्धन हूं, सन्त-महात्मा तो वही हैं जिन्हें धन-धान्य का लोभ-लालच न हो। धन क्षणिक सुख का अवलम्बन तो हो सकता है किन्तु स्थाई सुख का आधार कदापि नहीं हो सकता। अधिक धन संग्रह से मानव-मन में विभिन्न प्रकार के विकार उत्पन्न होते हैं। अपने परिश्रम से जीवनोपयोगी धन का अर्जन करना कोई बुराई नहीं परन्तु उस धन में किसी की 'हाय' छिपी हुई न हो, रक्त के छींटों की छाप न हो। ऐसे दूषित धन से मानवता के गुण प्रदूशित होने की पूरी पूरी सम्भावना बनी रहती है। तुम्हारे शिष्टाचार और मृदुल-व्यवहार से मुझे ऐसा लगा कि तुम्हारे पास नैतिक-बल, चरित्र-बल, तपोबल एवं मानसिक-बल प्रचुर मात्रा में विद्यमान है। तुम इतनी दिव्य-गुणों की स्वामिनी हो, इसीलिए शायद तुम अधिक धन के लिए चिन्तातुर भी नहीं हो।

ओहो देवी! मैं तो भावावेश में आकर तुम्हें उपदेश देने की धृष्टता कर रहा हूँ वर्ना तुम तो स्वयं ज्ञानवान हो। तुम्हारे इस पवित्र आंगन में मेरा हार्दिक-स्वागत होने से मैं भावनाओं के प्रवाह में बहता हुआ अपनी भूख-प्यास, तथा थकावट ही भूल गया। मुझे यहां आकर हार्दिक प्रसन्नता तथा मानसिक-तृप्ति प्राप्त हुई है। अतः हे देवी! तुम्हारे घर में जो कुछ भी रूखा-सूखा भोजन बना हुआ है, मुझे खिला दो।"

तब वह महिला भी शीघ्रता से घर के भीतर चली गई और ताज़ा मक्की की दो रोटी बना कर थाली की भान्ति काष्ठ-निर्मित एक स्वच्छ-पात्र में साग की सब्ज़ी के साथ एक मक्खन का गोला रख कर लाई और उस महात्मा के सन्मुख परोस दिया। महात्मा-रूपी उस नाग ने बड़े आनन्द पूर्वक भोजन से तृप्त होकर कहा-"हे देवी! ऐसा स्वादिष्ट भोजन तो मैंने आज तक कभी नहीं खाया, मेरी माता मुझे अधिकतर दूध ही पिलाया करती थी।" ऐसा कहने के पश्चात् उस महात्मा को विगत घटनाओं का स्मरण हो आया और उसकी आंखों में आंसू झिलमिलाने लगे।

महात्मा की आंखों में आंसू देख कर उस महिला की आंखों में भी आंसू की बून्दें झलकने लगी, फिर कुछ रुक कर हाथ जोड़ कर कहने लगी-"हे महात्मन्! दूध तो इस समय मेरे घर में नहीं है, मेरी गाय आज से लगभग छः मास पूर्व ही दूध देने से बन्द हो गई थी, यह मक्खन जो आपने अभी खाया है, उसी गाय का है और उसी समय का रखा हुआ है।"

महिला की बातें सुनकर महात्मा ने गद्गद् होकर कहा-"हे देवी! मुझे उस गौमाता के दर्शन करा दो, जिसका मक्खन मैंने अभी अभी खाया है।"

यह सुन कर महिला ने महात्मा को अपनी गौशाला के द्वार तक पहुंचाया। गौमाता के दर्शन पाकर महात्मा ने गऊ के अगले खुरों पर अपना माथा रखकर साष्टांग प्रणाम किया, फिर उस महिला से कहने लगा-"हे देवी! अपने घर के अन्दर से कोई जल से भरपूर पात्र लाओ, मैं अपने हाथ से गौमाता को जल पिलाऊँगा।" महिला ने पानी का पात्र लाकर महात्मा के हाथ में थमा दिया और स्वयं वह गाय के लिए घास लाने के लिए दूसरी ओर चली गई।

महात्मा ने गऊ को पानी पिलाया और स्वयं भगवान शिव-शंकर का ध्यान कर प्रार्थना की-"हे प्रभु! इस गृह-स्वामिनी ने मेरा बड़ा उपकार और सत्कार किया है। एक भूखे अतिथि को भोजन से तृप्त किया है। इस गौमाता का मक्खन भी खिलाया है। अब मेरी हार्दिक कामना है कि इस गौमाता का थन फिर से दूध से भर जाए और सदैव ही दूध देती रहे, इसके थन से दूध कभी भी समाप्त न हो और इस देवी की अतिथि-सेवा भावना सदैव बनी रहे।

इस प्रकार प्रार्थना करने के पश्चात् उस महात्मा ने पानी का पात्र उस गाय के थन के निकट रखा और स्वयं गौशाला से बाहर अपने आसन पर आकर बैठ गया। इतनी ही देर में गृह-स्वामिनी महिला घास का गट्ठर लेकर गौशाला के द्वार के आगे खड़ी हो कर भीतर झांकने लगी तो क्या देखती है कि गऊ के चारों थन से दूध की धारा एक शिव-लिंग के ऊपर गिर रहीं हैं। दूध की धारा शिव-लिंग को पूर्णरूप से नहला कर उसके चारों ओर फैल कर धरती पर बिखर रही थी। वह अपनी दोनों आंखों को बार बार मलने लगी कि शायद वह कोई सपना तो नहीं देख रही है।

परन्तु जब वह ध्यान लगा कर बार बार देखने लगी तो उसे फिर वही दृश्य दिखाई देने लगा। तब उसने शीघ्रता से महात्मा को आवाज़ देकर बुलाया और गौशाला के भीतर देखने के लिए प्रेरित किया जब उसे भी वैसा ही दृश्य दिखाई दिया तब उसने गृह-स्वामिनी से कहा-"देखो देवी! हम दोनों बड़े भाग्यशाली हैं, भोले शंकर ने हमें लिंग-रूप में दर्शन देकर कृतार्थ किया है। विशेष रूप से आज तुम जैसी सती-साध्वी नारी के तपोबल के परिणाम स्वरूप ही भगवान शंकर कामधेनु के साथ तुम्हारी गौशाला में अवतरित हुए हैं। आओ हम गौशाला के भीतर चल कर भगवान शंकर का ध्यान व स्तवन कर साष्टांग प्रणाम करें।"

वे दोनों गौ-शाला के भीतर जाकर आंखें बन्द करके भगवान का ध्यान और स्तवन करने लगे और साष्टांग प्रणाम करने के उद्देश्य से शिव-लिंग के आगे झुके और फिर खड़े होकर शिव-लिंग की ओर देखने लगे तो वहां के दृश्य का ही परिवर्तन हो चुका था। शिव-लिंग के स्थान पर जल पिलाने का वह पात्र दूध से लबालब भरा हुआ था और थन से दूध की धारा भी बन्द हो चुकी थी। उन दोनों ने गौशाला के भीतर चारों ओर देखा पर शिव-लिंग कहीं भी दिखाई नहीं दे रहा था।

शिव-लिंग को अचानक लुप्त होते देख कर वे दोनों एक दूसरे की ओर देखने लगे, फिर महात्मा ने आंखें बन्दकर और दोनों हाथ जोड़कर भगवान शंकर का ध्यान करके गृह-स्वामिनी से कहा-"हे देवी! पूजा की जो भी सामग्री तुम्हारे पास है उसे यहां शीघ्रता से लाओ, और साथ में ताज़ा और स्वच्छ एवं पवित्र जल का पात्र, मुट्ठी भर जौ, थोड़े से तिल, हवन के लिए ज्वलन-शील छोटी और पतली लकड़ियां भी यहां लाकर रख दो। मैं इस हवन में किसी कन्या के हाथ से हवन-सामग्री की आहूति डलवाना चाहता हूं, यदि यहां पड़ोस में किसी की बारह वर्ष से कम आयु की कन्या हो तो उसका हाथ-मुंह धुलवा कर यहां ले आओ।"

साधू-महात्मा का कथन सुन कर गृह-स्वामिनी को अब अपनी कन्या की याद आई जो पड़ोस की लड़कियों के साथ किसी के 'खलिहान' (आंगन) में खेलने गई हुई थी। गृह-स्वामिनी ने आवाज़ देकर अपनी लड़की को बुलाया और अपने साथ लेकर उस महात्मा के सामने बिठाकर कहा-"बेटी! महात्मा जी के चरणों में दण्डवत् प्रणाम करो।"परन्तु महात्मा ने कन्या को दण्डवत् प्रणाम करने से रोक दिया और कहा-"नहीं देवी! यह कन्या तो साक्षात दुर्गा-रूप है, मैं तो प्रथम इसके चरणों की पूजा करके भगवान-शंकर की अराधना करूँगा, तभी हमारी यह पूजा-अराधना सार्थक होगी।

नाग-रूपी महात्मा ने हवन की सूक्ष्म-सामग्री से गौ-माता और कन्या का विधिवत् पूजन किया और भगवान से उन दोनो मां-बेटी के लिए दीर्घ आयु का वरदान मांगा। इस पूजा-अराधना के पश्चात् वे तीनों गौशाला से बाहर निकल आए। इसके पश्चात गृह-स्वामिनी उस दूध के पात्र को शीघ्रता से घर के भीतर ले गई तथा महात्मा और कन्या हेतु पीने के लिए दूध ला कर दिया।

आनन्दपूर्वक दूध पीकर उस महात्मा ने उन दोनों मां-बेटी को दीर्घ-जीवन का आशीर्वाद देकर कहा-"आज से सातवें दिन एक भयंकर तूफान आने वाला है। इस गांव के पश्चिम दिशा में तुम्हें दोपहर के पश्चात् आसमान में कोई छोटा सा बादल का टुकड़ा दिखाई दे, तब तुम दोनों अपने मुख्य द्वार की ओट में बैठ जाना और अपने सिर को ऊपर से एक 'सूप' से ढक करके बैठ जाना। तब तुम उस तूफान से सर्वथा सुरक्षित रहोगी, तुम्हारे ऊपर किसी भी प्रकार की विपत्ति नहीं आएगी, और इस गाय का बहुत सा दूध किसी पात्र में अपने पास ही रख छोड़ना। जब भी तुम दोनों मां-बेटी को भूख सताएगी तब दूध पीकर अपनी भूख का शमन करती रहना। इस पात्र में रखा हुआ दूध कभी समाप्त नहीं होगा। इस गांव में तुम्हारे घर के अतिरिक्त कोई भी घर शेष नहीं रहेगा। फिर मैं कुछ दिनों के पश्चात् तुम से आकर मिलूंगा। तब मैं तुम्हारी सारी व्यथा दूर कर दूंगा। मेरी इस चेतावनी का विशेष ध्यान रखना तथा तुम्हें किसी भी बात से चिन्तित व घबराने की आवश्यकता नहीं।"

क्रमशः.....

धर्म, कर्म में क्या रखा है, शुरू करो छ़रमा ...

– अजय लाहुली
पत्रकार, दैनिक भास्कर केलंग

क्षेत्र में खूब हल्ला मचा है, सीबकथॉर्न का। अरे धर्म, कर्म के लंगोट में क्या धरा है, छ़रमा की बात करो, छ़रमा की। छ़रमा, एक शाश्वत सत्य। प्रचार यही चला है, पोस्टर भी खूब लगे हैं। यह छ़रमा क्या बला है भई? अरे भई वही छ़वागटुम्ची, क्यूरिची... नहीं समझे! सरला.... हां सीबकथॉर्न। ठीक, ठीक....। खूब सुध ली जा रही है। क्यों न हो, कमाऊ झाड़ी जो बना है। बीते ज़माने की बात कर रहे हो, जब इसके खट्टे फलों से जी उब जाता था। सुना तुमने! इसके खट्टे फ़ल तो बड़े गज़ब हैं। 60 किस्म की दवाईयां, कॉस्मेटिक और 160 प्रकार के हेल्थ फूड, और तो और इसके पत्तों से बनेगा धांसू हर्बल टी। है न आम के आम गुठलियों के दाम।

चाईना की तो बात ही मत पूछो। इसी पर तीन सौ उद्योग लगा दिए। अपने यहां भी 20 उद्योग लगाने की बात चली है। चाईना और रूस के मुकाबले में होंगे हम। क्या बात है! छ़रमा ने तो हमें सुर्खियों में ला दिया है। अखबार में तो बस चर्चा है, तो लाहुल और छ़रमा की। रेट? फल के 25 और पत्तियों के 160 रुपया प्रति किलोग्राम। वाह! क्या बात है। दशहरे का खर्चा तो आराम से निकलेगा। क्या बात करते हो? कम्पलीट कामधेनु झाड़ी है, पूरी आर्थिकी बदलेगी। थोड़ी सी मेहनत, सुबह–शाम और फिर आसानी से एक हज़ार रुपया। चुटकियों में 30 हज़ार की मासिक आय।

होड़ लगी है होड़। जापान ने तो एडवांस बुकिंग भी कर ली है। कल के अखबार में छपा था। पूरे डेढ़ अरब डॉलर की खरीद करेगा। अब तो डॉलर की वर्षा होगी। एक हेक्टेयर में 20 लाख, वाह जी वाह! अभी तो बस सालाना एक करोड़ का ही निर्यात होगा। फ्यूचर की सोचो। कितने सुखद होंगे डॉलर के दर्शन। अभी से चर्चा है तो बस, सिर्फ और सिर्फ सीबकथॉर्न की।

हर वर्ष छः लाख छ़रमा की झाड़ी, 150 हेक्टेयर बंजर भूमि पर। हरियाली ही हरियाली। बहुत खूब। अपने डी0डी0पी0..... दबाकर दारू पी या ढांक में डाल पैसा। धत्! नहीं रे। अपने बहुचर्चित प्रोजेक्ट की बात कर रहा हूं। अच्छा, वही न जिससे लाहुल के भूखे–नंगे पहाड़ खूब हरे–भरे हुए हैं। हां, वही अपना हरियाली का पुराना साथी। हर प्रोजेक्ट में अब छ़रमा का ही बोलबाला होगा। बंधु, छ़रमा मंत्र का जाप करो, कल्याण बस इसी में है। क्या कह रहे हो यार! सचमुच ऐसा है क्या? बता रहे हैं कि दिन में आराम से 20 किलो पत्तियों का तुड़ान हो जाता है।

पर यार, तुड़ान में कांटे बहुत तंग करते हैं। इसमें कौन सी मुश्किल है, अपनी महिलाएं हैं न,

नहीं तो भादर लगा दो भई। वैसे, कांटों का मसला भी हल होने वाला है। टिशू कल्चरड़ प्लांट पर काम चल रहा है। फिर कांटों का मसला भी हल होने वाला है। अपने विज्ञानी लगे हैं न। फलां गांव में भादर लगा कर खूब तुड़ान हुआ है, हमें भी कुछ करना पड़ेगा, हमारे ज़िमी में तो यूं ही पड़ा रहता है। केयर का कोई फंडा नही है, स्प्रे का झंझट नहीं, बस तोड़ो और बेचो। पत्तियों को छाया में सुखाओ, थोड़ी बहुत छंटाई, कितना आसान है। माल रिजेक्ट नहीं होता? सब अफवाह है यार। सेटिंग कर लो कंपनी के कारकूनों से, सब ठीक हो जाता है। तुड़ान और ढ़ेर सारा पैसा जेब में, सिंपल। इसे कहते हैं हींग लगे न फिटकरी, रंग भी चोखा।

भई, महिला मंडलों में इन दिनों सीबकथॉर्न हॉट टोपिक है। जुराबों के डिज़ाइन सेकेंडरी ईशू हो चले हैं। अब एक–दूसरे की नुक्ताचीनी में क्या रखा है। अपने नए डीसी साहब भी तो खूब इंट्रेस्ट ले रहे हैं। टास्क फोर्स भी गठित है। छुटियों में भी कार्यशालाओं का दौर है। वाह! क्या बात है? चर्चा के केन्द्र में है, डीसी साहब की छ़रमा की बातें। नए डीसी साहब भी खूब हैं। आलू के बाद छ़रमा में ही जुटना पड़ेगा, ऐसा कह रहे थे। माल के लिए गांव में गाड़ी भेजने की व्यवस्था भी कर दी है।

भई, भविष्य में मार्केटिंग का क्या होगा? हॉप्स की तरह फुस्स तो नहीं होगा न? उस दौर में भी हॉप्स की बड़ी बातें हुई। मार्केट के डाउन होने से हॉप्स के जड़ों को उखाड़ने में खूब सर खपाया। दिहाड़ी पर मज़दूर लगाने पड़े। सट्रक्चर पर खर्च राशि भी डूब गई। क्या बात करते हो, भेड़चाल वाली तो बात ही नहीं रही। कौन सा तुम अपने ज़मीन पर लगा रहे हो? कुछ तो ऐसे ही उगा है, बाकि बंजर ज़मीन ज़िंदाबाद। फिर कंपनी के साथ तीन साल का करार तो है ही। प्रोजेक्ट पंजीकरण करो, 30 लाख तक की राशि बैंक ऋण देगी। 15 करोड़ का प्रोजेक्ट एप्रूवल के लिए भेजा है। फिर तो आर्थिक सवेरा ही सवेरा। प्रशासन भी तो मदद कर रही है।

फिर भी मुझे लगता है कि.... यार तुम परेशान बहुत कर रहे, ठान तो नहीं लिया कि मेरे सपनों पर पानी फेर कर ही दम लोगे। बढ़िया सोसाईटी भी बन गई है। विदेशों से अनुभव समेट कर लाएंगे.... रुक। पहले भी तो चाईना की तफरी मार लौटे हैं। क्या सिखाया? जो अब सिखाएंगे। तुम सोसाईटी की बात कर रहे थे न? सोसाईटी तो आलू और हॉप्स को लेकर भी बनी है। एशिया की प्रतिष्ठित आलू सोसाईटी, एल. पी.एस. मनाली। जब तक ठीक लोग थे, चल रही थी गाड़ी। सोसाईटी की लुटिया डुबोई, तो किनारा कर लिया। सोसाईटी को ऑक्सीजन देकर किसी तरह टिकाया है। बता रहे हैं कि मेजर सर्जरी करनी पड़ेगी। अब हॉप्स की सोसाईटी भी धक्काशाही से चल रही है। एक और सोसाईटी, फिर वही चक्कर। बाज़ार में पहले ही धूल चाट चुके हैं, अब फिर तैयारी है? बाज़ार के नब्ज़ के अनाड़ी फिर ऊंची उड़ान पर हैं। क्या फिर से औंधे मुंह गिरने के लिए कमर कस रहे हो? कचूमर निकल जाए तो फिर मत कहना। हसीन सपने टूटने के लिए ही तो होते हैं, आगे तुम्हारी मर्ज़ी। .....

❋❑❋❑❋❑❋

समय-प्रबन्धन ही कुंजी है सफल जीवन की

- नवङ तन्ज़िन खलेपा

समय की महिमा और मर्यादा में जीवन के समस्त रहस्य समाए हैं। समय का हर पल, हर क्षण बहुमूल्य है। प्रतिक्षण बेशकीमती है। समय क्षण-क्षण की बूंदों से विनिर्मित एक अनन्त धारा है, जिन में जन्म के रूप में जीवन अनवरत बहता रहता है। काल का कोई क्षण सामान्य नहीं होता है। यह असामान्य और अद्‌भुत होता है, क्योंकि वह कोई क्षण ही था, जिस ने हमें जीवन दिया। वह कोई क्षण ही है, जो हमें सुख और दुःख का अनुभव कराता है, सफलता और असफलता का दान देता है। हर क्षण एक अनूठा अवसर ले कर आता है। उस क्षण के सदुपयोग में ही सच्ची सार्थकता है।

समय का प्रवाह अजस्र है। होश में जीने वाले सचेत व्यक्ति उसका सदुपयोग कर लेते हैं, इसलिए उन्हें बुद्धिमान कहा जाता है। परन्तु सामान्यतः लोग सचेत नही रहते हैं और सब कुछ गँवाते रहते हैं। कुछ भी हाथ नहीं लगता है, बल्कि जो कुछ रहता है, वह भी बिखर जाता है। इस के रहस्य को खोजने पर पता चलता है कि अचेतनताजनित आलस्य ही इस का ज़िम्मेदार है। आलस्य और वह भी बेहोशी भरा, समय को फुलझड़ी के समान जलाता रहता है। अचेत मानसिकता हमें किसी भी चीज़ का मूल्य आँकने-परखने नहीं देती है और यदि प्रयासपूर्वक कुछ ख्याल आता भी है तो कोई लाभ नहीं होता, क्योंकि उस पल तक अवसर हाथ से फिसल गया होता है।

अस्त-व्यस्त जीवन शैली और नकारात्मक आदतें भी बहुमूल्य अवसरों को होली के समान जलाती रहती हैं। ये साधनों को, जिन के द्वारा सफलता पाई जा सकती है, उन्हें या तो नष्ट कर देती है या उन्हें अत्यन्त जटिल बना देती हैं। फलतः जो काम आसानी और सरलता से हो जाता, वही उलझ कर रह जाता है और अंत में सब कुछ समाप्त हो जाता है। आज के व्यस्ततम् और आधुनिक जीवनशैली की गहराई में झाँकें तो यही तथ्य नज़र आता है। इस संदर्भ में विख्यात समय प्रबंधनकर्ता रॉबर्ट रोसेक का कहना है कि समय अपनी गति के अनुरूप चल रहा है। इस की गति न तो अधिक है और न कम। 24 घंटे की इसकी अवधि भी निश्चित है। सभी के लिए यही समय है और इसी समय को साधन के रूप में प्रयुक्त करना होता है। रॉबर्ट के अनुसार आधुनिक तकनीकी को समयानुकूल, सहज-सरल बनाने की अवश्यकता है। इसके साथ ही अपनी अस्त-व्यस्त जीवनशैली को सुव्यवस्थित तथा सोच को कार्य के अनुरूप ढ़ालना चाहिए। तभी समय का सार्थक सदुपयोग हो सकेगा।

"मैनेजिंग स्ट्रेस" के प्रख्यात लेखक ब्रायन ल्यूक सिवाई के अनुसार समय का काँटा मन की घड़ी पर घूमता है। अतः सचेतन मन से ही समय का सदुपयोग किया जा सकता है। संज्ञान-बोध के इस संदर्भ में "न्यूरोफिज़ियोलॉजिस्ट्स" की मान्यता है कि मस्तिष्क के बायें गोलार्द्ध में ही समय को परखने, जानने, समझने की क्षमता है। दायें गोलार्द्ध में ऐसी सामर्थ्य क्षमता नहीं है, परन्तु नवीनतम अनुसंधान से स्पष्ट होता है कि मस्तिष्क के बायें गोलार्द्ध में विश्लेषणात्मक बुद्धि होती है, जब कि दायें गोलार्द्ध में कल्पना-शक्ति जो समय के सुनियोजन में आवश्यक भूमिका निभाती है। अतः कहा जा सकता है कि मस्तिष्क के दोनों गोलार्द्धों से सम्बन्धित संज्ञान-बोध से समय का बेहतरीन सदुपयोग किया जा सकता है।

न्यूरोसाइकोलॉजी की इस आधुनिकतम खोज में उपनिषद् के मंत्र-सूत्र ही झलकते दिखाई देते हैं, जिनमें कहा गया है कि दृढ़ इच्छाशक्ति और प्रबल संकल्प के बल से समय-चक्र को बलात् इच्छानुकूल मोड़ा-मरोड़ा जा सकता है। हालाँकि ये तथ्य सूत्रों में कहे गए हैं, जिन का मर्म और अर्थ बड़ा ही व्यापक और गहरा है। परन्तु यह निश्चित

है कि मानसिक शक्तियों को नियंत्रित-संयमित करके, समय का सार्थक सदुपयोग किया जा सकता है। आजकल समय की महत्ता और महत्व कुछ अधिक ही बढ़ गया है, क्योंकि प्रतिष्ठित कार्पोरेट एवं व्यवसाय जगत, अर्थतंत्र में कम समय में अधिक उत्पादकता पर ज़ोर दिया जा रहा है। यही बुद्धिमत्ता है। अध्यात्म-जगत में भी कुछ ऐसे ही उसूल एवं नियम हैं। दुर्धर्ष तपस्वी घनघोर तपस्या कर कुछ ही समय में अपार शक्तियों-विभूतियों के स्वामी बन जाते हैं, जिन्हें प्राप्त करने में सामान्य लोगों को सामान्यत: बीस, सौ, हज़ार वर्ष लग सकते हैं। ब्रह्मनाड़ी पर ध्यान करने वाला ध्यानयोगी एक पल में सामान्य योगी के युगों तक किए जाने वाले ध्यान के बराबर शक्ति अर्जन कर लेता है। यही समय का सच्चा प्रबंधन है, जिसे हरेक अपने-अपने कार्यक्षेत्र में क्रियान्वित करके लाभान्वित हो सकता है।

समय का परिस्थिति के अनुरूप उचित एवं सार्थक ढ़ंग से उपयोग करना समय-प्रबंधन कहलाता है। इस के अंतर्गत प्राथमिक, निर्धारित समय और व्यक्तिगत ज़िम्मेदारी को क्रियान्वित करने की योजनाएँ आती हैं। कार्य करते समय सामने अनेक कार्य घूमने लगते हैं। इन सभी में ऐसे कार्य का चुनाव करना चाहिए, जिसकी आवश्यकता सर्वोपरि हो। प्राथमिकता उसी कार्य को देनी चाहिए, जो हमारे वर्तमान समय की सबसे बड़ी माँग हो। फिर कार्य का चुनाव कर उस की समय-सारणी बनानी चाहिए कि इस कार्य को कितने समय में और कब तक पूरा करना है। तत्पश्चात् अपनी पूरी ज़िम्मेदारी समझ कर कार्य का शुभारंभ करना चाहिए। 'सिवाई' के अनुसार इस प्रकार चरणबद्ध ढ़ंग से नियत समय में किया गया कार्य अवश्य सफल होता है। आधुनिक भाषा में इसे ही समय प्रबंधन कहा जाता है।

समय प्रबंधन के क्षेत्र में अनुसंधानरत ड्र स्कॉट ने अपनी कृति "हाऊ टू पुट मोर टाइम इन योर लाइफ" में स्पष्ट किया है कि समय सब के लिए नियत और निश्चित होता है। इसका सार्थक उपयोग करना चाहिए। समय की धारा में जो कुशल तैराक की तरह बहता है, जो अपनी दिशा तय करता है, अपनी राहें गढ़ता है, जीवट भरे पुरुषार्थ के साथ धारा को काट किनारा पाता है, वह निश्चित रूप से अपने लक्ष्य को पाकर ही रहता है।

समय की धारा में बेजान मुर्दा भी बहता रहता है। वह लहरों के थपेड़ों में उठता-गिरता और पटखनी खाता रहता है। उसका न तो कोई लक्ष्य होता है और न वह उस तक पहुँचने के उद्देश्य से अपने पल-क्षण का सदुपयोग करने में समर्थ होता है। बेजान-निष्प्राण हो उसे तो सिर्फ बहना आता है। समय के सदुपयोग के संदर्भ में अपनी स्थिति को तलाशना-टटोलना होगा कि कहीं हम भी ऐसे तो नहीं हैं? यह ज्वलंत प्रश्न है, महाप्रश्न है। इस पर गम्भीर चिंतन की आवश्यकता है। जो भी हो, समय के बहते प्रवाह में अपने समय के सदुपयोग के लिए तत्क्षण तत्पर-तैयार होना चाहिए। इसी पल संकल्पित हो जाना चाहिए।

काल का नियम ही है - अनवरत-निरन्तर बहना। इस सच्चाई को समझा जाए कि हम भी इस धारा में बह रहे हैं। अत: हम अपने समय, दिन, महीनों, वर्षो का सदुपयोग करना सीख जाएँ। ऐसी कार्य योजना बनाई जाए, जिसमें प्रत्येक वर्ष के साथ प्रत्येक दिन और हर पल के उद्देश्यपूर्ण उपयोग का सुअवसर हो। कोई भी पल और क्षण व्यर्थ न जाने पाए, क्योंकि जीवन का हर क्षण बहुमूल्य होता है। ध्यान रहे, कार्य-योजना एकांगी न हो, बहुआयामी हो। इसमें हमारे चिन्तन, चरित्र, व्यवहार से ले कर परिवार, समाज, कार्यालय सभी संपूर्ण रूप से समय के सामञ्जस्य के साथ प्रतिपादित-परिभाषित हों।

समय के सदुपयोग से ही जीवन की सार्थकता सिद्ध हो सकती है। समय के महत्त्व को पहचान कर ही जीवन में आने वाले उचित अवसरों का सदुपयोग किया जा सकता है। इसके लिए हमें प्रत्येक पल, प्रत्येक दिन को संपूर्ण एवं समग्र रूप से जीना सीखना चाहिए। समय का सदुपयोग करके ही जीवन जीने की कला सीखी जा सकती है। एक भव्य और आकर्षक व्यक्तित्व का निर्माण किया जा सकता है। ❋❑❋❑❋❑❋

योबरंग गांव की प्राकृतिक व पारम्परिक घड़ी

– विकास

मनुष्य के जीवन में समय का बड़ा महत्व है। प्राचीन काल से ही मनुष्य अपनी दिनचर्या को निर्धारित करने के लिए कई तरह के उपाय करता रहा है और इसी क्रम में कालान्तर में घड़ी का आविष्कार हुआ। हमारे जनजातीय इलाके के लोगों ने भी प्राचीन समय से ही कई तरह के पारम्परिक तरीके खोजे होंगे और इसी क्रम में योबरंग गांव के लोगों ने भी अपने दैनिक क्रियाकलापों को नियंत्रित करने के लिए एक प्राकृतिक घड़ी का आविष्कार किया जो कि गांव में 'लक्शापठ' के नाम से प्रसिद्ध है। लक्शापठ यानि लक्शा से मिलती जुलती पत्थर पर बनी सफेद रंग की आकृति। यह लक्शापठ गांव के सामने वाली पहाड़ी पर अंकित आकृति है जिसे गांव से या खेत–खलिहान इत्यादि से स्पष्ट देखा जा सकता है। चूंकि हमारे सारे इलाके की आजीविका कृषि पर आधारित है और साथ ही साथ भौगोलिक परिस्थिति के अनुसार सभी कृषि कार्य ग्रीष्म ऋतु में ही किए जाते हैं। स्वच्छ आसमान में जब शिला की छांव इस आकृति के मध्य में पड़ती है तो लगभग दोपहर का समय होता है। यानि आधुनिक घड़ी के हिसाब से 12.00 बजे के आसपास का समय होता है। वैसे तो अब गांव की काफी बड़ी आबादी पढ़ लिख गई है लेकिन अभी भी गांव के काफी बुजुर्ग अनपढ़ हैं, और जिन पर कृषि कार्य का भार भी है तो वे इसी पारम्परिक घड़ी का उपयोग अपने दैनिक कार्यों में करते हैं। जैसे कि दोपहर से पहले का त्यूवार या दोपहर के बाद का त्यूवार (सिंचाई के पानी की बारी), कृषि कार्य के दौरान खेत में काम करने वालों के लिए खाना लाना, घर में रखे हुए पशुओं को पानी पिलाना, आकृति पर पड़ने वाली छांव के हिसाब से वक्त का अंदाज़ा लगाना इत्यादि। वैसे तो सुबह का आरम्भ सूर्योदय के साथ तथा शाम का आरम्भ सूर्यास्त के साथ होता है लेकिन दिन के समय को निर्धारित करने में यह घड़ी गांव के जीवन में अपनी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। गांव के बुजुर्ग बल्कि यूं कहें कि सभी गांव–वासी इस आकृति पर पड़ने वाली छांव को देखकर पूरे दिन के वक्त का अंदाज़ा लगाते हैं। अगर हम इसको गांव की प्राकृतिक व पारम्परिक घड़ी की संज्ञा देते हैं तो अतिश्योक्ति नहीं होगी।

लक्क्षा – भेड़ की अगली भुजा।

दो रातें एक दिन

– राजीव गोम्थाङ्पा

03 मार्च, 1979 – लाहौल घाटी, बर्फ की सफेद चादर ने पूरी घाटी को ढ़क रखा था। पिछले पाँच दिनों से हो रही भयंकर बर्फबारी ने यहाँ के लोगों को किस कदर परेशान कर रखा था, वे ही जानते हैं।

रात का एक पहर बीत चुका था। घर के सभी लोग गहरी नींद सो रहे थे। गहरी नींद भी क्यों न सोयें, सुबह से शाम तक घर की छतों और आँगन से जमी बर्फ को हटाना पड़ता था। सिर्फ रात के समय थोड़ा आराम कर पाते थे।

लेकिन आज रात विधाता को शायद कुछ और ही मंजूर था। मैं और मेरी पत्नी तंदूर वाले कमरे में सो रहे थे। इस बुढ़ापे में अन्य कमरों में सोना तो दूर, ऐसा सोचना भी हमें मंजूर न था। पिछले कुछ दिनों से ठण्ड़ मानो हड्डियों को भेद रही थी। हमारे दोनों बेटे अपनी बीवी और बच्चों के साथ अन्य कमरों में सो रहे थे। एक नेपाली नौकर था, वह भी अपने कमरे में सो रहा था। बेचारा पिछले 25 सालों से हमारे यहाँ काम कर रहा था। मैं उसे भी अपने बेटे जैसा ही प्यार करता था।

सभी सो रहे थे लेकिन पता नहीं क्यों आज मेरी नींद बहुत टूट रही थी। मुड़कर मैंने अपनी पत्नी की तरफ देखा, वह भी आराम से सो रही थी। मैंने भी पासा बदल कर सोने की कोशिश की। अभी आँख लगी ही थी कि अचानक एक भयंकर सी आवाज़ हुई – धड़ाम–डिप्प–ड़िप्प – ऐसा लगा मानो आसमान ही टूट कर हम दोनों पर गिर गया हो। कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि अचानक यह क्या हो गया। हड़बड़ाहट में मैंने उठने की कोशिश की तो महसूस किया कि मेरी टाँगों पर मानों हाथी के वज़न का सामान रख दिया गया हो। मेरे ज़ोर लगाने पर भी दोनों टाँगें टस से मस न हुईं। उसी पल मैंने अपनी पत्नी को आवाज़ दी। धीमें से स्वर में उसने जवाब दिया, "सुनों जी, यह क्या हो गया, मेरी छाती पर इतना वज़न क्यों है, इसे हटाओ।" जब मैंने उसकी छाती पर हाथ रखा तो मानो जैसे मेरे पैर से ज़मीन खिसक गई। मेरा पूरा हाथ खून से लथपथ हो गया था। उसकी छाती पर नुकीला पत्थर आ गिरा था। मैंने उसे आवाज़ दी। वह कुछ बड़बड़ाई जो मैं समझ न सका। मैं उसका नाम चिल्लाता रहा, चीखता रहा, रोता रहा – वह कुछ न बोली। **अन्त में फिर हार कर जब अपना हाथ उसके चहरे की तरफ बढ़ाया तो उसका चेहरा एकदम ठण्ड़ा हो चुका था। अपनी लाचारी और बेबसी पर मुझे तरस आ रहा था। हे भगवान, मेरी पत्नी मेरे सामने चल बसी और मैं बदकिस्मत उठ भी न सका। उसका सर अपनी गोद में भी न ले सका। तभी मुझे ख्याल आया और मैं अपने बेटों को पुकारने लगा। किन्तु दोनों में से किसी ने भी उत्तर नहीं दिया।** बहुओं और पोतों को भी आवाज़ दी – जवाब फिर न आया। थक कर हस्ता बहादुर (नौकर) को आवाज़ दी। सोचा कम से कम वह तो 'जी मालिक' कहेगा, किन्तु व्यर्थ, मानो सबकी तरह उसे भी साँप

सूंघ गया था।

क्या करुं, ये एकाएक क्या हो गया, कुछ भी समझ नहीं आ रहा था। सामने पड़ी अपने जीवन साथी की लाश को देखकर स्तब्ध था। इतना कुछ हो गया, कम से कम बच्चों को तो आना चाहिए था। फिर भी मैं उन्हें पुकारता रहा। चीखते चिल्लाते थक कर मेरी आँख लग गई।

बच्चों के खेलने की आवाज़ें जब कानों में पड़ीं तो नींद टूटी। मैंने उन्हें पुकारा। लेकिन खेल में इतने मस्त थे कि उन्हें अपने दादा की आवाज़ सुनाई नहीं पड़ी। तभी बड़ी बहू ने हस्ता को आवाज़ दी और उसे गाय–भेड़ों को घास–पानी ड़ालने को कहा। मैंने दोनों को आवाज़ दी, मगर दोनों ने मेरी आवाज़ को अनसुना कर दिया।

जब तक आवाज़ें आती रहीं, मैं मदद के लिए चीखता रहा और अपने आप को कोसता रहा। फिर कब आँख लगी पता ही नहीं चला। जब जागा तो फिर अपने को उसी हाल में पाया। चीख–चीख कर गला दर्द कर रहा था। कितना समय बीत गया–कोई अन्दाज़ा न था। तभी छोटे बेटें की आवाज़ कान में पड़ी। शायद बच्चों को ड़ांट रहा था। पूरी ताकत बटोर कर उसे आवाज़ दी – एक बार, दो बार, तीन बार – न जाने कितनी देर मैं चीखता रहा, किन्तु शायद सब के सब बहरे हो गये थे। अब तो भूख और प्यास भी लगनी शुरु हो गई थी।

"हे भगवान! यह क्या खेल खेल रहा है तू। मेरे अपने ही बच्चे मुझे अनसुना कर रहे हैं। क्या हो गया है इन्हें। अपने बूढ़े माँ–बाप की ज़रा भी चिन्ता नहीं। प्रभु, मुझे क्यों तड़पा रहे हो। मुझे भी मेरी पत्नी के पास भेज दो, प्रभु, भेज दो।" यही विनती प्रभु से करता रहा। और कब ये बूढ़ा शरीर नींद की आगोश में चला गया, पता ही नहीं चला।

चेहरे पर कुछ ठंड़क सी पड़ी और एक रोशनी का एहसास हुआ। कानों में कुछ आवाज़ें सुनाई पड़ रही थीं। कोई शायद आवाज़ दे रहा था। शायद कोई मेरा नाम ले रहा था। मगर अब गले में जान न थी कि उत्तर दे पाता। सर उठा कर देखा तो छेद से कोई झाँक रहा था।

थोड़ी देर बाद फिर जब होश आया तो मैंने अपने आप को किसी दूसरे के घर में पाया। अपने आस पास के गाँव के अन्य लोगों को देख कर मैं परेशान हो उठा। " क्या बात है भइया, आप सब लोग एक साथ। और मेरी बीवी,, मेरे बच्चे, मेरा परिवार कहाँ पर है? मुझे यहाँ कौन लाया ?" तभी मेरे एक मित्र ने मेरे सर पर हाथ फेरते हुए मुझे बताया कि मैं अपना समूचा परिवार परसों रात आए ग्लेशियर में खो चुका हूँ। ये सुनकर मानो मुझ पर सैंकड़ों बिजलियाँ एक साथ गिर पड़ीं। एक साथ अपने परिवार की आठ लाशों को देखकर मेरी आँखें फटी की फटी रह गईं।

अब मैं 86 साल का हो गया हूँ और आज उस हादसे को 26 साल बीत गए। लेकिन आज भी उन आवाज़ों की सच्चाई को ढूंढ रहा हूँ, जिनके साथ मैंने दो रातें और एक दिन बिताया।

❋❑❋❑❋❑❋

लाहुली वृत्तचित्र आस्था के रंग

कुछ कर दिखाने का प्रयास

– घरसंगी द श्रुङमे

सृजनात्मक जंक्स

आस्था के रंग, पतझड़ी इन्द्रधनुष एक नई अभिव्यक्ति की तलाश! इस वृत्तचित्र को देखकर काफी भावनाएं उठीं और थम गईं लेकिन वृत्तान्त वर्णन के दौरान नेपथ्य संगीत अखरती रही। अन्यथा काफी हद तक वृत्तचित्र व्यावसायिक रूप से तैयार किया गया है। वृत्तान्त वर्णन के साथ संगीत ऐसा लगता है कि इसके जनजातीय रस को आधुनिकता के स्वाद में घोल कर पिलाया जा रहा हो। क्योंकि यह वृत्तचित्र साधारण विषय पर न होकर इस धरती पर देवताओं के अलौकिक मिलन के अवलोकन हेतु था और ऐसा परिवेश जिसके हर कण-कण से पुरातन समाज की छवि दिख रही हो वहां इसके नेपथ्य संगीत ने इसका मूल रस निचोड़ लिया है। पुरातन रहस्यवाद को पुर्नजीवित करने का एक मौका खो दिया गया है। बाकी तकनीकी खामियां रहेंगी ही क्योंकि एक सही वृत्तचित्र बनाने का मतलब है कि मोटे बजट का प्रावधान जो कि इस स्तर पर थोड़ा मुश्किल है। लेकिन प्रथम प्रयास को देखकर लगता है कि भविष्य में लाहुली विषयों पर काफी प्रभावशाली वृत्तचित्र देखने को मिलेंगे। इस वृत्तचित्र के बनाने वालों को बहुत-बहुत बधाई! खासकर यू०एफ०ओ० अपने उद्देश्यों पर खरा उतर रहा है।

इसी के साथ लायुल सुर संगम द्वारा प्रस्तुत फागली पर वृत्तचित्र भी देखा। कथानक, संयोजन, चित्रांकन स्तरीय न होते हुए भी विषयों को काफी हद तक सही परिपेक्ष्य में पिरोने की कोशिश की गई है। लेकिन वृत्तचित्र बनाते समय इसके विभिन्न कार्यक्षेत्रों को समझने की आवश्यकता होती है, खासकर *'मोन्टेज'* के रचनात्मक पहलू को जानना बहुत ही आवश्यक हो जाता है। फिर भी प्रथम प्रयास है और आगे इनसे भी बहुत उम्मीदें हैं।

**मोन्टेज* – दो या अधिक विभिन्न कथानकों को समन्वित रूप से जोड़ कर पेश करना।

लाहुली गीत और संगीत

क्या हिन्दी के बोलों को लाहुली राग में परोसना लाहुली संगीत है?

– घरसंगी द श्रुङमे

सृजनात्मक जंक्स

पिछले एक-दो वर्षों से लाहुली गीत विभिन्न रूपों में सामने आ रहे हैं। आधुनिक तकनीक ने कलात्मक चीज़ों की उपलब्धता आसान कर दी है। आज कम बजट में भी आप ऑडियो व वीडियो सी०डी० बना सकते हैं। इसी कड़ी में लाहुली सांस्कृतिक समूहों द्वारा कई ऑडियो व वीडियो सी०डी० बाज़ार में उतारी गई जिन्हें लोगों ने हाथों-हाथ लिया। यहां पर मैं 'भौंरा-संगा लेई जा' पर टिप्पणी करना चाहूंगा। 'शगुन' के बाद 'भौंरा-संगा लेई जा' व्यावसायिक तौर पर बनाई गई है जहां इस विधा के हर पहलु पर काफी तवज्जो दी गई है। लेकिन उपरोक्त सभी ऑडियो व वीडियो में एक बात अखरती है वह है इनके बोल। भौंरा में जहां तक बोलों का प्रश्न है एक नयापन तो है लेकिन भाषा को देखें तो घुरे को छोड़कर कहीं भी लाहुलीपन नहीं है। यह भी देखने में आया है कि गाते वक्त लाहुली शब्दों का उच्चारण अपने मूल रूप में नहीं किया जाता है। ऐसा लगता है मानो गायक उन शब्दों का हिन्दीकरण कर जाते हैं। यह इसलिए हो सकता है कि आम व्यवहार में भी हम अब हिन्दी भाषा का प्रयोग ज़्यादा कर रहे हैं। लेकिन यह गीति विधा की दृष्टि से एक नकारात्मक पक्ष ही कहा जाएगा। सृजन के इस दौर में अब समय आ गया है कि लाहुली भाषा के बोलों के साथ प्रयोग करके अपनी माटी की खुशबू बिखेरते गीत लेकर लोग आगे आएं। क्योंकि हमारी हर घाटी की बोली सघन रूप से सृजन के लिए गुणात्मक प्रकृति लिए है। भविष्य में ऐसी उम्मीद है कि लाहुली संगीत ऐसा रास्ता तय करे जहां सृजन से माटी की खुशबू बिखरे।

छनः शबलो बोर्चो फेरे, दङरिङ क्वांटितु टोक्ठे
फरपटिक्ते फम्बतोरे, ध्वां शुबि जुस स्वङलो घीतरे।
सेम अतङआ छुङसिरङ, छनः सेमू कुचुरिङ किरिमिरि श्वा
दु सेम ठुक्ट्राड़ो, दु सईबिऊ, टोक्ठे चेऊईं केचे घीतरे।

LPS

IN SERVICE OF THE VALLEY

The Lahoul Potato Growers Co-op. Marketing cum Processing Society Ltd., Manali, P.O. Manali, Distt. Kullu (H.P.)

Ph: 01902-252346, 253048 Fax: 01902-253047

For the farmer, of the farmer, by the farmer

We are serving the farmer for over 3 decades by marketing their disease free and high yielding varieties of Seed Potatoes and Apples.

We are also suppliers of consumer goods, kerosene oil, Petrol, Diesel, Tyre and Tubes, Spray Oil and authorised dealers of Hindustan Lever Limited Products.

Our Sister Concerns :-

Hotel Chandermukhi
(Kullu-Manali National Highway)

LPS Processing Unit, Raison
(Kullu-Manali National Highway)

SH. NORBU BARONGPA
Chairman

SH. LAL SINGH
Vice Chairman

SH. NAWANG BODH
Managing Director

Sowing seeds for a prosperous future

स्वांगला एरतोग सोसाईटी रजि० के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक सतीश कुमार लोप्पा द्वारा शर्मा ग्राफिक्स, सरवरी कुल्लू से टाईप सैटिंग तथा मुद्रित। संपादक - डॉ० छिमे शाशनी